thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 12 अक्तूबर 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 12 अक्तूबर 2014 से 18 अक्तूबर 2014

का.कृ. 04 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 129, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

महात्मा हंसराज स्कूल पंचकूला में हुआ विश्व साक्षरता दिवस का आयोजन

विश्वसाक्षरता–दिवस के उपलक्ष्य में हंसराज पब्लिक स्कूल ने भजन सन्ध्या का आयोजन किया गया जहाँ पर विद्यालय के आर्य युवा समाज के उत्साही सदस्यों ने साक्षरता, विशेष तौर पर महिलाओं की शिक्षा की दिशा में प्रयास करने का संकल्प लिया। कार्यक्रम का प्रारम्भ प्रसिद्ध विदुषी एवं उपदेशिका, 'पंडिता मिथिलेश शास्त्री' के गाए भजनों से हुआ। उन्होंने भजनों के माध्यम से ही श्रोताओं को साक्षरता का संदेश दिया।

इस अवसर पर उपस्थित स्वामी आर्यवेश, प्रधान, सार्वदेशिक सभा, नई दिल्ली ने अपने आर्शीर्वचनों के द्वारा आर्य युवा समाज को इस दिशा में अत्यधिक प्रयास करने के लिए प्ररित किया।

श्रीमान हंसराज गंधार, सलाहकार, डी.ए.वी.सी.एम.सी., नई दिल्ली ने अपने ओजस्वी भाषण से युवा वर्ग को झकझोरा ताकि वे महिला साक्षरता के लिए अधिकाधिक योगदान दें। अपनी बात पर बल देने के लिए उन्होंने वैज्ञानिक तर्को के साथ वेदों के उद्धरण दिये।

कार्यक्रम में प्रदेश के सभी मुख्याध्यापक/मुख्याध्यापिकाएँ तथा समाज के गणमान्य उपस्थित थे। विश्व साक्षरता दिवस को तर्कसंगत बनाने के लिए, दिन का प्रारम्भ, खड़ग मंगोली में रहने वाले जरुरतमंद बच्चों में लेखन एवं पाठन सामग्री के वितरण से हुआ। इस अवसर पर उन्होंने प्राचार्या जया ने कहा कि ''हंसराज विद्यालय साक्षरता एवं समाज सेवा के लिए प्रतिबद्ध है अतः अपना सामाजिक दायित्व निभाने के लिए समय–समय पर ऐसे आयोजन करता रहेगा। उन्होंने धन्यवाद ज्ञापन करते हुए सभी विशिष्ट अतिथियों से आग्रह किया कि वे उनके इस प्रयास में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें। कार्यक्रम का समापन सभी उपस्थित जनों के लिए प्रसाद के रुप में 'ऋषिलंगर' से हुआ।

डी.ए.वी. यमुनानगर के प्राचार्य सी.बी.एस.ई अॅवार्ड से हुए सम्मानित

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल के प्रधानाचार्य वी.एस.ठाकुर को शिक्षा क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए भारत सरकार के मानव संसाधन एवम् विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी द्वारा 4 सितम्बर, 2014 को सम्मानित किया गया।

इस उपलब्धि के लिए हवन यज्ञ द्वारा उस परमपिता परमेश्वर के प्रति आभार व्यक्त करते हुए प्रबन्ध कर्त्री समिति के सदस्यों व प्रतिष्ठित प्रतिनिधियों ने अपने वक्तव्यों में कहा कि यमुनानगर के इतिहास में यह नई शुरुआत है कि किसी प्राचार्य को सी.बी.एस.ई. अवॉर्ड से सम्मानित किया गया हो।

श्री वी.एस. ठाकुर को इससे पहले भी इनकी प्रतिभा के लिए समय–2 पर अनेकों पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

विद्यालय के समस्त शिक्षकवृंद एवम् कर्मचारियों की ओर से प्रधानाचार्य जी को इस उपलब्धि पर ढेरों शुभकामनाएँ दी गईं। इस सुअवसर पर प्रबन्धकर्त्री समिति के कोषाध्यक्ष डॉ. एम.सी. शर्मा जी ने श्री ठाकुर को बधाई देते हुए कहा कि आप जैसे जमीन से जुड़े हुए और सोच में बड़े लोग ही इस सम्मान के अधिकारी होते हैं। यमुनानगर डी.ए.वी. संस्थाओं के चेयरमैन श्री विजय कपूर ने कहा कि आज समाज और देश को ऐसे ही कर्मठ, व्यक्तित्व के धनी व्यक्तियों की आवश्यकता है। श्री वी.एस. ठाकुर ने इस सम्मान का श्रेय प्रंबधनकर्त्री समिति तथा अपने विद्यालय के समस्त सहकर्मियों को देते हुए कहा कि यह पुरस्कार केवल मेरा नहीं बल्कि हमारे विद्यालय से जुड़े हर एक व्यक्ति के समुचित प्रयासों का प्रमाण है। उन्होंने कहा कि निरन्तर परिश्रम व दृढ़ निश्चय ही उनकी इस उपलब्धि का रहस्य है।

आई.डी. डी.ए.वी. हिसार के बच्चों ने किया 'मोक्ष वृद्ध आश्रम' का दौरा

आर्य समाज ईश्वर देवी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल हिसार की प्रधानाचार्या श्रीमती सुनीता बहल के नेतृत्व में विद्यालय के अध्यापकगण ने 'मोक्ष वृद्ध आश्रम' का भ्रमण किया। श्रीमती बहल ने कहा श्राद्ध पक्ष में हम अपने बुजुर्गों को याद करते हैं लेकिन वे बुजुर्ग जो अपने पारिवारिक रिश्तों के सुख से वंचित हैं उनके साथ थोड़ा – सा समय व्यतीत करना व उनकी भावनाओं को महसूस करना ही सच्चा तर्पण है। आश्रम में वृद्धजनों से मिलकर वास्तव में जीवन का सार्थक अर्थ समझ आता है कि श्राद्ध का अर्थ है श्रद्धा। आश्रम के सहायतार्थ विद्यालय की तरफ से 100 किलो खाद्य सामग्री प्रदान की गई। आश्रम के संचालक श्री विजय भृगु ने प्रधानाचार्या की स्मृति चिह्न भेंट किया व प्रधानाचार्या महोदया ने आश्रम की सुव्यवस्था को सराहा और उत्तरोत्तर भागीदारी के लिए सदैव तत्पर रहने का आश्वासन दिया।

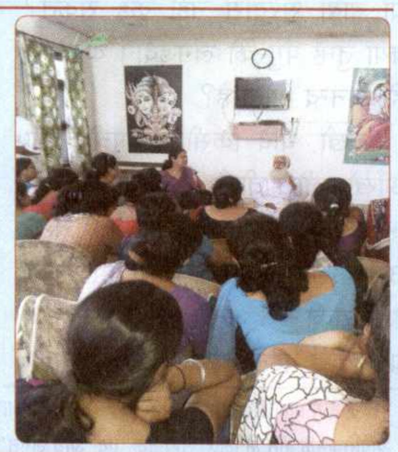

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 12 अक्तूबर, 2014 से 18 अक्तूबर, 2014

विकलांगों के प्रति सद्भाव रखें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

यस्यानक्षा दुहिता जात्वास, कस्तां विद्वाँ अभिमन्याते अन्धाम्।
कतरो मेनिं प्रति तं मुचाते, य ईं वहाते य ईं वा वरेयात्।।

ऋग् १०.२७.२२

ऋषिः **ऐन्द्रो वसुक्रः**। देवता **इन्द्रः**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● **(यस्य)** जिसकी, **(दुहिता)** पुत्री, **(जातु)** कदाचित्, **(अनक्षा)** बिन आँखों की, **(आस)** हो जाती है [तो], **(कः विद्वान्)** कौन विद्वान्, **(तां)** उसे, **(अन्धां)** अन्धी, **(अभिमन्याते)** मानता है।, **(कतरः)** कौन, **(तं प्रति)** उसके प्रति, **(मेनिं)** वज्र, **(मुचाते)** छोड़ता है, **(यः)** जो, **(ईं वहाते)** इसके भार को वहन करता है, **(यः वा)** या जो **(ईं वरेयात्)** इसे वरता है, इससे विवाह करता है।

● क्या तुम किसी विकलांग को देखकर सहानुभूति से द्रवित होने के स्थान पर कठोर हो जाते हो? क्या तुम सोचते हो कि विधाता ने ऐसे हाथ, पैर, अंगुलि, आँख, जिह्वा, श्रोत्र आदि किसी अंग से विकृत करके इसे कष्ट भोगने के लिए ही सृजा है? यदि तुम्हारा अपना कोई सम्बन्धी विकलांग होता, तो भी क्या तुम उसके प्रति ऐसा ही व्यवहार करते? किसी अन्धे, काने, लूले, लंगड़े, बहरे, कुष्ठी आदि को देखकर तुम्हारी आँखे भर क्यों नहीं आतीं, हृदय दयार्द्र क्यों नहीं होता, ममता क्यों नहीं उद्वेल्लित होने लगती, सहायता की भावना क्यों नहीं बल लाती? तुम सहानुभूति प्रदर्शित करने के स्थान पर उल्टा अन्धे को अन्धा कहकर पुकारते हो और कटे पर नमक छिड़कते हो। क्या तुम उसे बेटा, भैया या बाबा सूरदास नहीं कह सकते? क्या तुम्हें पंगु को लंगड़दीन कहने में ही आनन्द आता है?

देखो, यदि किसी की पुत्री बिना आँखोंवाली होती है, तो क्या वह उसे अन्धी कहकर पुकारता है? नहीं, उसके लिए तो वह 'रानी बेटी' ही होती है। उसकी उस अन्धी पुत्री के भार को यदि कोई वहन करता है और उसका पाणिग्रहण करता है, तो क्या उसके प्रति उसके नेत्र सजल नहीं हो जाते और उसे वह साधुवाद नहीं देता? क्या वह उस सहायक के प्रति वाणी से वज्रपात करता है? क्या वह उसे बुरा–भला कहता है? क्या वह उसे मारने के लिए हाथ में वज्र उठाकर दौड़ता है? नहीं वह तो उसका माथा चूमता है और उसे शत–शत धन्यवाद देता है। ऐसा ही व्यवहार क्या उसे किसी दूसरे की पुत्री को अन्धी देखकर नहीं करना चाहिए? ऐसा ही दयालुता का बर्ताव क्या उसे अन्य किसी अंग से विकल भाई, बहन, पुत्री आदि को देखकर नहीं करना चाहिए?

अतः आओ, आज से विकलांगों की सहायता का व्रत लें। किसी भी विकलांग को देखकर उसके प्रति ममत्व की भावना मन में जागृत करें। स्वयं से व्यक्तिगत रूप में जो भी हो सके, उसके लिए करें और उसे समाज एवं राष्ट्र से भी सहायता दिलाने का प्रयत्न करें। विकलांगों के लिए आतुरालय, शिक्षणालय आदि खुलवाकर उनके प्रति जो हमारा ऋण है, उससे उऋण हों। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में सामवेद के मंत्र में आए ''विष्णु'' शब्द के बाद 'सूर्य' और 'ब्रह्म' के विषय में विचार रखते हुए स्वामीजी ने बताया कि सूर्य के अनुसार चलने का अर्थ है– उसके गुणों को अपने अन्दर धारण करना, और इसके बाद उन्होंने सूर्य की विशेषताएँ बताईं। पहली विशेषता बताई कि व्यक्ति को कर्तव्य के पालन में किसी भी समय प्रमाद नहीं करना है और इस विषय में उन्होंने अमेरिका में किस प्रकार लोग अपने कर्तव्य को पूरा करते हैं इसका ज़िक्र किया। दूसरे गुण के रूप में सूर्य से निरन्तर चमकते रहने का गुण धारण करने की बात कही, और तीसरे गुण के रूप में सब को अपनी ओर आकर्षित करने की बात कही। सूर्य से सीखने की चौथी बात बताई और कहा कि मानव को मानवता का केन्द्र नहीं छोड़ना है और यदि यह केन्द्र छूट जाता है तो निरंतर पतन ही पतन है। उन्होंने कहा कि स्वयं मानव बनो और दूसरों को भी मानव बनाओ। दूसरों के साथ मनुष्य जैसा व्यवहार करो। 'मनुर्भव' की बात कहते हुए स्वामी जी ने बताया कि स्वयं इंसान बनो, दूसरों को भी भगवान का भक्त बनकर मानवता के रास्ते पर चलना सिखाओ–यह बात सीखनी है तो चमकते हुए सूर्य से सीखो। सूर्य के अनुसरण करने का अर्थ यही है। सूर्य के शेष गुण बताने बाकी हैं जो अगले अंक में बताए जाएंगे।

अब आगे....

(आज पूज्य स्वामी जी महाराज की कथा का आखिरी दिन था। सुनने वालों की भीड़ बहुत थी। स्त्रियाँ, पुरुष, बच्चे, बूढ़े, जवान, दुकानदार, सरकारी कर्मचारी, पढ़ाने वाले टीचर, सभी प्रकार के लोग थे। पूज्य स्वामी जी ने 'ओ३म्' का लम्बा उच्चारण करने के बाद कहा–)

मेरी प्यारी माताओ और सज्जनो!

पाँच दिन पहले मैंने यह कथा आरम्भ की थी। कहा था– दुनिया में दो रास्ते हैं उनकी बात आपको सुनाऊँगा। ये रास्ते हैं 'श्रेय मार्ग' और 'प्रेय मार्ग'। मुसाफ़िर जा रहा है, चलता जाता है, चलता जाता है, तभी सड़क दो हिस्सों में बँट जाती है। एक हिस्सा दाईं ओर जाता है, दूसरा बाईं ओर।

बाईं ओर को जाने वाले रास्ते पर फूल खिलें हैं, बिजली की रोशनी हैं, झाड़ और फ़ानूस भी लगे हैं, पक्की सड़क है, सुन्दर है इस पर स्थान–स्थान पर सुन्दर स्त्रियाँ नाच रही हैं, सुगन्धि उभर रही है। गीत भी हो रहे हैं। मन को बहुत खींचने वाला रास्ता है वह। मुसाफ़िर ने कहा– 'यह अच्छा है।' आगे बढ़ा, देखा, सड़क पर एक बोर्ड लगा है। उस पर लिखा है– 'यह रास्ता विनाश की ओर जाता है।' घबराकर वह वापस आया।

दाईं ओर जाने वाले रास्ते को देखा– सड़क है टूटी–फूटी, कहीं गढ़े, कहीं टीले, कहीं बड़ी–बड़ी चट्टानें और सड़क के बीच में काँटेदार झाँडियाँ। रोशनी नहीं, रंग तथा सुगन्धि की सभाएँ नहीं, नाच रही, गीत नहीं। परन्तु इस सड़क पर भी एक बोर्ड लगा है। उस पर लिखा है– 'यह रास्ता परम आनन्द को जाता है।'

अब मुसाफिर क्या करे? किधर जाये? दाईं ओर जाने को जी नहीं चाहता। बाईं ओर का रास्ता विनाश का रास्ता है, तब वह करे क्या?

इन्हीं दो रास्तों का कठोपनिषद् में यम ने 'श्रेयमार्ग' और 'प्रेयमार्ग' कहा– 'कल्याण का रास्ता' और 'प्यार का रास्ता'।

नचिकेता को कितने ही लालच यम ने दिये– 'दुनियाभर का राज्य ले लो, लम्बी आयु ले लो, बल ले लो, सम्पत्ति ले लो, हीरे, मोती, जवाहर, मकान, सम्पति ले लो, सुन्दर स्त्रियाँ, बहुत बड़ा परिवार ले लो।'

नचिकेता ने उत्तर दिया– यह सब–कुछ तो समाप्त होने वाला है। महर्षे! देर हो या सवेर से, इन वस्तुओं का अन्त हो जाता है। यौवन सदा नहीं रहता, यह शरीर भी नहीं, सुन्दर घुँघराले बाल भी एक दिन सफेद हो जाते हैं, चाँद–सा चमकता चेहरा भी एक दिन झुरियों से भर जाता है। और दौलत....दौलत से

thearyasamaj.org

क्या कभी किसी की सन्तुष्टि होती है? यह वह पानी है जिसे जितना पियो, उतनी ही प्यास बढ़ती है। पेट फूल सकता है, प्यास समाप्त नहीं होती। पेट फट सकता है, फिर भी प्यास का अन्त नहीं होता।

और नचिकेता कहता है– महर्षे,

'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः।'

'दौलत से कभी किसी की प्यास नहीं बुझती।' यह सब–कुछ मुझे चाहिए नहीं।

यम ने जब देखा कि नचिकेता का मन पक्का है, वह लालच में नहीं आता, 'प्रेयमार्ग' का आकर्षण इसे अपनी ओर नहीं खींचता, तब उसे बताया–

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति।
तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीमि ओमित्येतत्।।

–कठो. 1/2/15

'सब वेद जिसके गीत गाते हैं और जिसकी महिमा बताते हैं, सभी तपस्वी, योगी और संन्यासी जिसके लिए तप करते हैं, जिसको पाने के लिए ब्रह्मचर्य को धारण करते हैं, वह तुझे बताता हूँ– वह 'ओ३म्' है।'

और यम ऋषि ने कहा–

एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम्।
एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्।।

–कठो. 1/2/16

'नचिकेता! यह अक्षर, जिसका कभी नाश नहीं होता, जो बढ़ता है न घटता है, जिसका कभी अन्त नहीं होता, यह ब्रह्म ही है, यह परम आत्मा है। इस अविनाशी को जो जान लेता है, वह जो कुछ भी चाहता है, वही उसे मिल जाता है।'

'श्रेय मार्ग' पर चलते हुए भी उसे 'प्रेय मार्ग' का सुख मिलता है। 'श्रेय मार्ग' के कष्ट उसके लिए समाप्त हो जाते हैं, क्योंकि वह उसका सहारा ले लेता है जो कभी समाप्त नहीं होता, जो परम आनन्द का और परम सुख का अमिट भण्डार है। लेते जाओ आनन्द, ले जाओ, लेते जाओ, भण्डार में कभी कमी नहीं आती।

और इस 'श्रेय मार्ग' पर चलना कैसे? इस 'ओम्' का सहारा लेकर आगे कैसे बढ़ना? अपने जीवन को कैसे बनाना? इसके लिए मैंने सामवेद का 61वाँ मन्त्र सुनाया। उसमें पहला शब्द है 'सोम'।

'सोम' के सम्बन्ध में मैंने बताया कि 'सोम' के अनुसार चलना हो तो अपने जीवन में 'सौम्यता' पैदा करो। नम्रता, मिठास, मीठी वाणी, पवित्र व्यवहार और ईश्वर के लिए प्रेमा भक्ति। स्वार्थ की भक्ति नहीं, दुकानदारी नहीं, बल्कि प्यार के कारण भक्ति, ईश्वर को ईश्वर के लिए चाहना।

दूसरा शब्द है– 'राजा'। इसके सम्बन्ध में मैंने बताया कि राजा का काम– कानून (विधान) बनाना, कानून को लागू करना, कानून के अनुसार चलना। तुम भी अपने लिए विधान–नियम बनाओ भाई! उनके अनुसार कब खाना है, कब सोना है, कब जागना है, कब कार्यालय का काम करना है, कब घर का काम करना, कब प्रभु–भजन करना है, सब बातों का समय निय करो। उसके अनुसार चलो। फिर यह भी देखो कि खाना क्या है, उसे पचाना कैसे है। आयुर्वेद शास्त्र कहता है–

"हितभुक्, मितभुक्, ऋतभुक्।"

यह चीज़ खाओ जो तुम्हारे शरीर के लिए अच्छी है, जिससे तुम्हारे शरीर को लाभ होता है। जो वस्तु तुम्हारे स्वास्थ्य के लिए अच्छी नहीं, उसे मत खाओ, और फिर यह वस्तु भी थोड़ी खाओ, अपना पेट फाड़ने का यत्न न करो।

आर्यसमाज के एक उपदेशक थे, उन्हें खीर बहुत अच्छी लगती थी। जहाँ भी मिलती, वहीं बैठ जाते, कितनी ही खीर खा जाते। मैंने एक बार उनसे पूछा– "पण्डित जी! यह क्या करते हो? खीर बहुत खाए जाते हो? 'वे बोले– "यह 'हितभुक्' है। मुझे खीर अच्छी लगती है।" मैंने कहा– "हितभुक् तो हुआ परन्तु आयुर्वेद शास्त्र ने 'मितभुक्' (थोड़ा सा) भी तो कहा है?'

अच्छा खाओ भाई, जो वस्तु लाभदायक है, उसे खाओ, परन्तु थोड़ा खाओ, उचित वस्तु, उचित परिणाम में। ऐसा न हो कि अभी तो खाते जाओ, बाद में डाक्टरों के पास दौड़ते फिरो की पेट–दर्द की दवा मिल जाय।

और फिर 'ऋतभुक्'– यह वस्तु खाओ जो नेक कमाई से मिली है। पाप का अन्न मत खाओ! यह तीन बातें करो तो शरीर भी ठीक रहेगा। मन, बुद्धि और चित्त में भी निर्मलता आ जायेगी।

तीसरा शब्द है 'वरुण' जिसका अर्थ है– श्रेष्ठ। मैंने आपको बताया कि मनुष्य श्रेष्ठ उस समय बनता है जब वह अधीनता से, बन्धन से मुक्त हो, और फिर यह भी बताया कि सबसे बड़ी स्वतन्त्रता है इन्द्रियों की दासता से मुक्त होना। दास के लिए कहीं भी सुख या चैन नहीं। फिर जो इन्द्रियों का दास हो, उसके लिए सुख और चैन कहाँ होगा? वह श्रेष्ठ कैसे बनेगा?

चौथा शब्द है 'अग्नि'। आगे सदा आगे बढ़ता है, सदा ऊपर उठती है। तुम भी आगे बढ़ो, ऊपर उठो। ईश्वर कहता है– ऐ इन्सान! मैंने तुझे ये इन्सानी शरीर दिया तो इसलिए कि तू ऊपर उठे, उन्नति करे, पहले की अपेक्षा उत्तम हो जाये। सो मेरे भाई! कुछ तो यत्न करो ऊपर उठने का। और कुछ नहीं तो यह ही यत्न करो कि अगला जन्म भी इन्सान के शरीर में मिले। अब यदि पूरी तरह ऊपर नहीं उठ सके तो अगले जन्म में उठ सको। ऐसा तो न करो कि मनुष्य का शरीर मिलना भी कठिन हो जाय। साँप का शरीर मिला या बिच्छु का या गन्दगी में पड़े रहने वाले कीड़े का, दर–दर पर दुतकारे जाने वाले कुत्ते का या ग्राम के बाहर मैला खाने वाले सुअर का, कर्म का फल मिलता है जरूर, इसलिए ऐसा कर्म करो कि ऊपर उठ सको। बहुत नहीं तो थोड़ा उठ सको।

पाँचवाँ शब्द है 'आदित्य'। गंदे कीचड़, खारी समुद्र, हर स्थान से वह निर्मल, शुद्ध, मीठा पानी ले लेता है। गन्दगी को, खारेपन को, कड़वे–पन को वहीं छोड़ देता है। तुम भी ऐसा ही करो। हर मनुष्य से उसके गुण ले लो, उसके अवगुण छोड़ दो। उसके गुणों को देखो, अवगुणों को उसी के पास रहने दो।

– क्रमशः

ध्यानयोग में मूर्ति पूजा की पुष्टि नहीं

● सूरजमल त्यागी

साकार मूर्तिपूजक, महर्षि पंतजलि के योगदर्शन और उसके महर्षि वेदव्यास के भाष्य, योगसूत्र विषयक ''ध्यान में , मूर्ति पूजा की भ्रामक–निराधार पुष्टि का प्रयास करते हैं। जबकि ध्यान योग में साकार जड़ मूर्ति पूजा का संकेत तक सिद्ध नहीं होता। मूर्ति पूजा समर्थकों का कथन है कि मूर्ति पूजा में साकार जड़वस्तु (मूर्ति) में ईश्वर की प्राण–प्रतिष्ठा मानकर, ईश्वर की पूजा पाठ करके, ईश्वर का ध्यान करते हैं। इसी प्रकार योगदर्शन के ध्यान विषय में भी साकार जड़ चस्तु की तरह, ललाट–भ्रकुटि–हृदय–नाभि आदि स्थानों पर ध्यान लगाना, टिकाना, केन्द्रित कर एकाग्र करने से मूर्ति पूजा की पुष्टि होती है।

इस भ्रम जाल में फँसकर सामान्य व्यक्ति ध्यान योग में साकार वस्तु पर ध्यान लगाना लिखा होने से भ्रमित होकर, मिथ्या जाल में फँस जाता है। जबकि मूर्ति पूजक का यह तर्क निराधार, शास्त्रोक्त एवं बुद्धिपूर्वक नहीं है। किसी भी योगदर्शन के भाष्य सूत्र से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष मूर्ति पूजा का संकेत भी नहीं है।

''ध्यान और जड़साकार मूर्ति पूजा दोनों एक दूसरे से भिन्न कर्म हैं। ध्यान और तथा कथित मूर्ति पूजा पर्याय वाची भी नहीं हैं। ध्यान में मन की वृत्तियों को सांस्कृति विषयों से हटाकर एक स्थान पर मन को रोककर परोक्ष ईश्वर का प्रत्यक्ष चिन्तन करने का नाम ध्यान है। ईश्वर अर्न्तयामी के स्वरूप में मग्न हो जाने का नाम ध्यान है। ईश्वर के स्वरूप को छोड़कर, किसी मन की वृति को मन में नहीं आने देना चाहिये। कुछ अल्पज्ञ यह मानते हैं कि जब तक कोई आकार–प्रकार–रूप–साकार आकृति व्यक्ति, प्रकृति आदि न हो, तब तक ध्यान नहीं हो सकता। यह मान्यता निराधार और असत्य है। क्योंकि जीव और सुख–दुःख का भी कोई आकार नहीं, इनके कोई हाथ–पैर नहीं है। शब्द का ध्यान किया जाता है। जिस वस्तु में जो गुण होते है उन्हीं के माध्यम से उस वस्तु का ध्यान किया जाता है। जब ईश्वर के हाथ–पैर आदि है ही नहीं तो ईश्वर के हाथ–पैर आकृति की मान्यता कितनी मूर्खता, अज्ञान और विपर्यय–ज्ञान है। सांख्य दर्शन में कपिल ऋषि कहते हैं **''ध्यान निर्विषयं मनः''**

ध्यान के माध्यम से अपने चपल–चंचल मन की विषय वासनाओं को रोकना है। ध्यान से ईश्वरीय अनुकम्पा में मग्न होकर, मन को खूँटे से बाँधना है। एक स्थान पर टिकाना–रोकना एकाग्र करना है। इसकी चंचलता पर अंकुश लगाना है। मन को उसके विषय शब्द–रूप–रस गंध–स्पर्श गंध से विमुक्त और विरक्त करने का एक मात्र साधन ध्यान योग ही है। जबकि मूर्ति में शब्द, रूप, रस, गंध स्पर्श आदि नितान्त व्याप्त रहते हैं। जो ध्यानयोग के विरुद्ध है। शेर को पिंजरे में , हाथी को अंकुश से , बच्चों को स्कूल में बैठाकर, सैनिकों को अनुशासन से और मन को ध्यान के खूँटे से बाँधकर, टिकाकर उसकी वृतियों पर नियन्त्रण किया जाता है।

ध्यान और तथाकथित साकार जड़मूर्ति पूजा पद्धति को लेकर दो बातों पर चिन्तन करना अनिवार्य है पहली बात है ''यथार्थ ज्ञान'' जो जैसा है, उसको वैसा ही जानना–मानना और करना होता है। ''दूसरी बात'' जैसी अपनी मान्यता, श्रद्धा–आस्था–विश्वास होता है, उसी के आधार पर उसकी मान्यता होती है। अर्थात् अन्य में अन्य का भाव मान लेना। गाय को घोड़ा और घोड़े को गाय, जड़ को चेतन

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

thearyasamaj.org

तथाकथित चार-धाम पाखण्ड हैं

● महात्मा चैतन्यमुनि

जब से आलस्य एवं प्रमाद के कारण वेद का पठन-पाठन छूटा, अनेक प्रकार के पाखण्ड एवं आडम्बर फैलते चले गए। आज व्यक्ति ईश्वर, उपासना, धर्म, कर्म, यज्ञ, व्रत, तीर्थ, श्राद्ध तथा गुरु एवं गुरुमन्त्र आदि के वास्तविक महत्व एवं स्वरूप आदि को पूर्णरूप से विस्मृत कर चुका है। चार-धाम के सम्बन्ध में भी अनेक प्रकार की कल्पित मान्यताएं स्थापित करके व्यक्ति जीवन को बर्बाद कर रहा है। चारों दिशाओं में चार-धामों के नाम पर चार स्थान सुनिश्चित कर दिए गए है जिनकी यात्रा करके व्यक्ति स्वयं को समस्त पापों से मुक्त होने तथा भवसागर से पार हो जाने की मिथ्या धारणा बनाए हुए है। वास्तव में यदि पापों से मुक्त होना इतना ही आसान है तो यह तो किसी के लिए भी असंभव नहीं है। लोग पैदल या किराया खर्च करके वहां पहुंच सकते हैं। ये कल्पित किए गए धाम हैं-पूर्व में जगन्नाथ-धाम, दक्षिण में रामेश्वरम्-धाम, पश्चिम में द्वारकापुरी-धाम और उत्तर में बद्रीनाथ-धाम। इन में से तीन भगवान् विष्णु को समर्पित हैं और चौथा धाम-रामेश्वरम्, भगवान् शिव को समर्पित है। बद्रीनाथ धाम उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में अलकनन्दा के तट पर स्थित है। लोगों की मान्यता के अनुसार जब तक व्यकित इस धाम की यात्रा न कर ले, उसकी तीर्थ यात्रा अधूरी ही रहती है। जगन्नाथपुरी-धाम उड़ीसा प्रदेश में समुद्र के तट पर स्थित है। रामेश्वरम्-धाम भारत की दक्षिण सीमा के अन्तिम स्थल पर स्थित है। यह स्थान पहले भूमि से मिला हुआ था, किसी भूगर्भीय परिवर्तन के कारण इस अन्तरीप का मध्य भाग दब गया और वहां समुद्र आ गया। इस तरह यह एक समुद्री द्वीप में स्थित है। द्वारकापुरी-धाम सौराष्ट्र प्रदेश में समुद्र के किनारे स्थित है। समय-समय पर इन तथाकथित धामों से सम्बन्धित अनेक काल्पनिक कथाएं एवं माहात्म्य आदि भी लिख दिए गए हैं जिनकी विस्तृत-चर्चा हम यहां विस्तार भय से नहीं कर रहे हैं।

एक पौराणिक कथा के अनुसार जगन्नाथ-धाम में सदाचार-भ्रष्ट पुण्डरीक तथा उसका मित्र अम्बरीष तपस्या करके पवित्र हो गए थे। यह मन्दिर राजा इन्दुधुम्न (इन्द्रदमन) ने बनवाया था। आश्चर्य यह है कि मूर्ति में श्रीकृष्ण तथा बलराम की बहिन सुभद्रा को श्रीकृष्ण तथा बलराम के मध्य में बिठाया गया है। भारतीय शिष्टाचार के अनुसार एक के वाम भाग में होने से पत्नी और दूसरे के दक्षिण भाग में होने से माता के समान होती है। काल्पनिक कथा में ऐसा नारद के कहने पर किया गया है... यहां पर प्रसाद के रूप में भात ठेकेदारों के माध्यम से बिकता है... इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में चर्चा की है। वहां प्रश्न किया गया ''भला यह तो जाने दो। परन्तु जगन्नाथ में प्रत्यक्ष चमत्कार है। एक कलेवर बदलने के समय चन्दन का लकड़ा समुद्र में से स्वयंमेव आता है। चूल्हे पर ऊपर-ऊपर सात हण्डे धरने से ऊपर-ऊपर के पहिले-पहिले पकते हैं। और जो कोई वहां जगन्नाथ की परसादी न खावे, तो कुष्ठी हो जाता है। और रथ आप-से-आप चलता, पापी को दर्शन नहीं होता है। इन्द्रदमन के राज्य में देवताओं ने मन्दिर बनाया है। कलेवर बदलने के समय एक राजा एक पण्डा एक बढ़ई मर जाने आदि चमत्मकारों को तुम झूठ न कर सकोगे?

इसके उत्तर महर्षि लिखते हैं- 'जिसने बारह वर्ष पर्यन्त जगन्नाथ की पूजा की थी, वह विरक्त होकर मथुरा में आया था, मुझसे मिला था। मैंने इन बातों का उत्तर पूछा था। उन्होंने ये सब बातें झूंठ बताई। किन्तु विचार से निश्चय यह है कि जब कलेवर बदलने का समय आता है, तब नौका में चन्दन की लकड़ी ले समुद्र में डालते है। वह समुद्र की लहरियों से किनारे लग जाती है। उसको ले सुतार लोग मूर्तियें बनाते है।

जब रसोई बनती है, तब कपाट बन्द करके रसोइयों के बिना अन्य किसी को न जाने न देखने देते हैं। भूमि पर चारों ओर छः और बीच में एक चक्राकार चूल्हे बनाते हैं। उन हण्डों के नीचे घी, मिट्टी और राख लगा, छः चूल्हों पर चावल पका, उनके तले मांजकर उस बीच के हण्डे में उसी समय चावल डाल (उसके ऊपर उन छः हण्डों को रख,) छः चूल्हों के मुख लोहे के तवों से बन्द कर, दर्शन करने वालों को जो कि धनाढ्य हों बुलाके दिखलाते हैं। ऊपर-ऊपर के हण्डों से चावल निकाल, पके हुए चावलों को दिखला, नीचे के कच्चे चावल निकाल दिखाके उनसे कहते हैं कि-'कुछ हण्डों के लिए रख दो'। 'आंख के अन्धे गांठ के पूरे' रुपए अशर्फी धरते, और कोई कोई मासिक भी बांध देते हैं। शूद्र नीच लोग मन्दिर में नैवेद्य लाते हैं। जब नैवेद्य हो चुकता है, तब वे शूद्र नीच लोग जूंठा कर देते हैं। पश्चात् जो कोई रुपया देकर हण्डा लेवे उसके घर पहुंचाते, और दीन गृहस्थ और साधु-सन्तों को लेके शूद्र और अन्त्यजपर्यन्त एक पंक्ति में बैठ जूंठा एक-दूसरे का भोजन करते हैं। जब वह पंक्ति उठती है, तब उन्हीं पत्तलों पर दूसरों को बैठाये जाते हैं। महा अनाचार है। और बहुतेरे मनुष्य वहां जाकर उनका जूंठा न खाके, अपने हाथ बना खाकर चले आते हैं। कुछ भी कुष्ठादि रोग नहीं होते। और उस जगन्नाथपुरी में भी बहुत से कुष्ठी हैं। नित्यप्रति जूंठा खाने से भी रोग नहीं छूटता। और यह जगन्नाथ में वाममार्गियों ने 'भैरवीचक' बनाया है। क्योंकि सुभद्रा श्रीकृष्ण और बलदेव की बहिन लगती है। उसी को दोनों भाईयों के बीच में स्त्री और माता के स्थान में बैठाई है। जो भैरवीचक न होता, तो यह बात कभी न होती।

और रथ के पहियों के साथ कला बनाई है। जब उनको सूधी घुमाते है घूमती है, तब रथ चलता है। जब मेले के बीच में पहुंचता है, तभी उसकी कील को उल्टी घुमा देने से रथ खड़ा रह जाता है। पुजारी लोग पुकारते हैं- 'दान देओ, पुण्य करो, जिससे जगन्नाथ प्रसन्न होकर अपना रथ चलावें, अपना धर्म रहै।' जबतक भेंट आती जाती है, तबतक ऐसे ही पुकारते जाते है। जब आ चुकती है, तब एक व्रजवासी अच्छे कपड़े दुशाला ओढ़कर आगे खड़ा रहके हाथ जोड़ स्तुति करता है कि- हे जगन्नाथ स्वामिन्! आप कृपा करके रथ को चलाइए, हमारा धर्म रखो। 'इत्यादि बोलके साष्टांग दण्डवत् प्रणाम कर रथ पर चढ़ता है। और 'जय-जय' शब्द बोल सहस्त्रों मनुष्य रस्सी खीचते है, रथ चलता है। जब बहुत से लोग दर्शन को आते हैं, तब इतना बड़ा मन्दिर है कि जिसमें दिन में भी अन्धेरा रहता है, और दीपक जलाना पड़ता है। उन मूर्तियों के आगे पड़दे खैंचकर लगाने के पर्दे दोनों ओर रहते हैं। पण्डे-पुजारी पुकारते हैं- 'तुम भेंट धरो, तुम्हारे पाप छूट जाऐंगे, तब दर्शन होगा। शीघ्र करो।' वे बिचारे भोले मनुष्य धूर्तों के हाथ लूटे जाते हैं। और झट पर्दा दूसरा खैंच लेते है, तभी दर्शन होता है। जब जय शब्द बोलके प्रसन्न होकर धक्के खाके तिरस्कृत हो चले आते है।

'इन्द्रमन' वही है कि जिसके कुल में लोग अबतक कलकत्ते में हैं। वह धनाढ्य राजा और देवी का उपासक था। उसने लाखों रुपए लगाकर मन्दिर बनवाया था। इसलिए कि आर्यवर्त्त देश के भोजन का बखेड़ा इस रीति से छुड़ावें। परन्तु मूर्ख कब छोड़ते है? 'देव' मानो तो उन्हीं कारीगरों को मानो, कि जिन शिल्पियों ने मन्दिर बनाया। राजा पण्डा और बढ़ई उस समय नहीं मरते, परन्तु वे तीनों वहां प्रधान रहते हैं। छोटों को दुःख देते होंगे, उन्होंने सम्मति करके उसी समय अर्थात् कलेवर बदलने के समय वे तीनों उपस्थित रहते हैं, मूर्त्ति का हृदय पोला रखा है। उसमें सोने के सम्पुट में एक सालगराम रखते हैं कि जिसको प्रतिदिन धोके चरणामृत बनाते हैं। उस पर रात्रि की शयन आर्त्ती में उन लोगों ने विष का तेजाब लपेट दिया होगा। उसको धोके उन्हीं तीनों को पिलाया होगा, कि जिससे वे कभी मर गए होंगे। मरे तो इस प्रकार, और भोजन भट्टों ने प्रसिद्ध किया होगा कि जगन्नाथजी अपने शरीर बदलने के समय तीनों भक्तों को भी साथ ले गए। ऐसी झूंठी बातें पराए धन ठगने के लिए बहुत सी हुआ करती हैं।'

रामेश्वर-धाम के सम्बन्ध में भी अनेक प्रकार की काल्पनिक गाथाएं गढ़ ली गई हैं। एक पौराणिक कथा के अनुसार जब श्रीराम रावण का वध करने के बाद सीतासहित आयोध्या जा रहे थे तो मार्ग में वे गंधमादन पर्वत पर रुके। उन्होंने वहां के ऋषि-मुनियों से पुलस्त्य वंशज रावण के वध से होने वाली ब्रम्हहत्या के पाप से छुटकारा पाने का उपाय पूछा जो ऋषियों ने उनसे कहा कि वे इस क्षेत्र में शिवलिंग की स्थापना करें। हनुमानजी को शिवलिंग लाने के लिए भेजा गया मगर उन्हें बहुत बिलम्ब हो गया अतः सीता ने वहां बालू से बनें शिवलिंग की स्थापना कर दी। हनुमान शिवलिंग लेकर लौटे तो उन्हें बड़ी निराशा हुई। श्रीराम ने उनसे कहा कि वे इस बालू के शिवलिंग को हटाकर अपने द्वारा लाए गए शिवलिंग की स्थापना कर लें मगर हनुमान द्वारा अपनी पूरी शक्ति लगाने पर भी वह बालू का लिंग नही हट सका अतः हनुमान के द्वारा लाए गए शिवलिंग की स्थापना भी पास में ही कर दी गई... महर्षि दयानन्द जी अपने ग्रन्थ में प्रश्न उठाते है- 'जो रामेश्वर में गङ्गोतरी के जल चढ़ाने समय लिंग बढ़ जाता है, क्या यह भी बातें झूंठी है? उत्तर-झूंठी। क्योंकि उस मन्दिर में भी दिन में अन्धेरा रहता है। दीपक रात-दिन जला करते हैं। जब जल की धारा छोड़ते हैं, तब उस जल में बिजुली के समान दीपक का प्रतिबिम्ब झलकता है, और कुछ भी नहीं। न पाषाण घटे न बढ़े, जितना का उतना रहता है। ऐसी लीला करके बिचारे निर्बुद्धियों को ठगते हैं।

प्रश्न- रामेश्वर को रामचन्द्र ने स्थापित किया है। जो मूर्त्तिपूजा वेदविरुद्ध होती, तो रामचन्द्र मूर्त्तिस्थापना क्यों करते? और वाल्मीकिजी रामायण में क्यों लिखते?

उत्तर- रामचन्द्र के समय में उस लिङ्ग वा मन्दिर का नाम चिन्ह भी न था। किन्तु यह ठीक है कि दक्षिण देशस्थ 'राम' नामक राजा ने मन्दिर बनवा लिङ्ग का नाम रामेश्वर धर दिया है। जब रामचन्द्र सीताजी को ले, हनुमान आदि के साथ

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– जीवन में घटने वाली प्रत्येक घटना क्या निश्चित होती है? पूर्वजन्म के कर्म फलित होते हैं, ऐसा कहते हैं? कृपया मार्गदर्शन कीजिए?

समाधान– उत्तर है:–

● देखिए, जीवन में घटने वाली प्रत्येक घटना निश्चित नहीं होती। **हमारे जीवन में जो–जो घटनाएं घटती जा रही हैं, वो पहले से निश्चित नहीं हैं।**

● कभी भी, कुछ भी, घटित हो सकता है। अच्छा भी हो सकता है, बुरा भी हो सकता है। पॉजीटिव भी हो सकता है, नेगेटिव भी हो सकता है। हमें सुख भी मिल सकता है, दुख भी मिल सकता है। सारे जीवन में सुख ही सुख नहीं मिलते। कुछ दुःख भी मिलते हैं। हम दुःख नहीं भोगना चाहते हैं। फिर भी दुःख आ जाते हैं, और भोगने पड़ते हैं।

● बहुत सारे दुःख ऐसे होते हैं, जो हमारे कर्मों के फल नहीं होते, फिर भी भोगने पड़ते हैं। पूर्वजन्म के कर्मों का फल कब और कैसे मिलता है, इस बारे में बहुत भ्रांति है।

● **कितने ही सुख–दुःख ऐसे होते हैं, जो पूर्वजन्म के कर्मों का फल नहीं हैं। और उन सुख–दुःख को लोग पूर्वजन्म का कर्म–फल मान लेते हैं।**

कल्पना कीजिए कि एक सेठ के यहाँ चोरी कर, दो लाख रुपये की संपत्ति चोर ले गए। सेठ ने सब सुरक्षा भी की थी, उसके बावजूद चोर आए, उन्होंने सब ताले तोड़ दिए, वे सब सामान ले गए। इस पर लोगों ने कहा कि – "इस सेठ ने पिछले जन्म में किसी का माल खाया होगा, दो लाख किसी का हड़प गए होंगे। अब इसको पिछले जन्मों के कर्मों का फल मिलाता है, इसके यहाँ चोरी हो गई।"

दरअसल, यह सोचना सही नहीं है। वास्तव में सेठ के यहाँ जो चोरी हुई, वो उसके पिछले कर्म का फल नहीं है। क्यों? अच्छा थोड़ी देर के लिए मान लेते है कि सेठ के यहाँ जो चोरी हुई, वो सेठ के पिछले जन्म के कर्म का फल है। **कर्म–फल के कुछ मोटे–मोटे नियम हैं। उन नियमों को जानते हैं। उदाहरण के लिए**

(1)पहली बात– न्याय करने के लिए **पहली शर्त** यह है कि जज साहब को पूरा मामला पता होना चाहिए। कर्म का पता होना चाहिए, अपराध का पता होना चाहिए। जो व्यक्ति कर्म का फल देता है, न्यायाधीश बनता है, तो यह आवश्यक है, **कि वो कर्म को जानता हो, तभी तो ठीक फल दे सकता है।**

क्या न्यायाधीश बिना कर्म को जाने ही ठीक फल दे सकता है? नहीं तो इसलिए कर्म को जानना आवश्यक है। जब तक कर्म को नहीं जानेगा, जब तक मुकदमा नहीं सुनेगा, तो ठीक से न्याय कैसे करेगा? कौन अपराधी है, उसने अपराध कैसे किया, कब किया, कहाँ किया, कितना किया, वो सब प्रमाण (एवीडेन्स) होना चाहिए। न्यायाधीश जब तक ये सारी बातें नहीं जान लेगा, तब तक क्या वह ठीक न्याय कर सकेगा? नहीं कर सकता।

(2)दूसरी बात– जितना अपराध हुआ, उसका दण्ड कितना दिया जाए। पेनल कोड (दण्ड संहिता) में क्या लिखा है? इतने अपराध का इतना दण्ड दो। **जज साहब को दण्ड संहिता का भी पता होना चाहिए।** अगर दण्ड का पता नहीं कि कितना दण्ड हो, तो भी वो न्याय नहीं कर पाएंगे। कर्म–फल के अनुसार ठीक–ठीक न्याय करने का दूसरा नियम यह हुआ।

(3)तीसरी बात– क्या प्रत्येक व्यक्ति को दंड देने का अधिकार है? नहीं। **निश्चित व्यक्तियों को दंड देने का अधिकार है, सबको नहीं, और वो ही कर्म का फल दे सकते हैं।** न्यायधीश महोदय को दण्ड देने का अधिकार दिया गया है। सड़क पर चलता हुआ व्यक्ति अपराधी को दण्ड नहीं दे सकता। वो ही अपराधी को दण्ड देंगे, जिनको अपराधी को दण्ड देने का अधिकार है।

चोर वाली घटना पर इन तीन नियमों को लागू कीजिए। चोरों ने सेठ के यहाँ चोरी की, दो लाख की संपत्ति ले गए। यह सेठ के पिछले जन्म के कर्मों का फल है, ऐसा मानते हैं, तो ये तीनों नियम वहाँ लागू करके देखिए।

क्या चोरों का पता है कि पिछले जन्म में सेठ ने कौन सा अपराध किया था, कितना बुरा किया, जिसका फल हम उन्हें देने के लिए आए हैं। जब चोर को सेठ के कर्म का ही पता नहीं, तो बताइए, कर्म–फल कहाँ लागू हुआ?

दंड का भी चोर को पता नहीं। वो कैसे निर्णय करेगा कि दो लाख की चोरी करूँ कि तीन लाख रुपये की या ढाई लाख की चोरी करूँ। कितना दंड दूँ, उसको क्या मालूम। **सेठ साहब ने कौन सा अपराध किया था, उसका चोर को पता नहीं, कितना किया था, यह पता नहीं, कितना दंड दूँ, वो भी पता नहीं।** चोरों को नहीं मालूम कि सेठ ने कौन सा अपराध किया था, तो वो फल कैसे माना जाये? जब दण्ड का पता नहीं, तो न्याय नहीं हुआ, इसलिए वह 'कर्म–फल' नहीं हुआ।

और दूसरी बात यह कि, **क्या चोरों को सेठ के पूर्व जन्म के कर्म का दंड देने का अधिकार है? उत्तर है– नहीं।** इस प्रकार न्याय कसौटी पर तीनों बातें फेल हो गईं।

(4)चौथी बात– जो कर्म का फल दिया जाता है, ठीक–ठीक न्याय से दिया जाता है, उसको चुपचाप भोगना पड़ता है, उसका विरोध नहीं कर सकते।

किसी अपराधी ने अपराध किया, न्यायधीश ने उसको दंड दिया कि तीन माह जेल में रहो। अब तो तीन माह उसको जेल में रहना ही पड़ेगा। चुपचाप उसको दंड तो भोगना ही पड़ेगा। उसका विरोध तो कोई कर ही नहीं सकता। यदि यह नियम आपको स्वीकार है तो चौथा नियम इस घटना पर लागू करते हैं–

चोरों ने सेठ के यहाँ दो लाख की चोरी। इस पर कुछ लोगों ने कहा कि– "यह तो सेठ को पिछले जन्म का कर्म–फल है। इसलिए सेठ को चुपचाप दंड भोगना चाहिए, चोरी का विरोध नहीं करना चाहिए, पुलिस में रिपोर्ट नहीं करना चाहिए।"

यदि कर्म–फल मानते हैं, तो चुपचाप भोगो। पुलिस में रिपोर्ट करने जायेंगे, तो फिर कर्म–फल कहाँ हुआ? कर्म–फल का तो विरोध हो नहीं सकता, और आप तो चोरी का विरोध कर रहे हो। अगर कर्म–फल मानते हैं, तो पुलिस में नहीं जाना, कोर्ट में नहीं जाना, मुकदमा नहीं करना। कोई अपील नहीं करना कि, हमारे यहाँ चोरी हुई। आपका कर्म–फल है, शांति से उसे भोगो।

(5)पाँचवी बात– एक न्यायाधीश महोदय ने एक आतंकवादी को फाँसी का दंड दिया– "इसको फाँसी पर चढ़ा दिया जाए। उसे बहुत सारे निर्दोष लोगों को मार डाला।" तो जल्लाद ने उस आतंकवादी को फाँसी पर चढ़ा दिया। न्यायाधीश महोदय के आदेश का पालन करने पर जल्लाद को वेतन मिलेगा या दण्ड मिलेगा?

जल्लाद ने आदेश का पालन किया है, तो उसके वेतन मिलेगा, ईनाम मिलेगा। ऐसे ही चोर ने भी सेठ के यहाँ चोरी की, उसने भगवान के आदेश का पालन किया तो उसको ईनाम दिलवाओ। जो लोग कर्मफल मानते हैं, उनको चोर को ईनाम दिलवाना चाहिए, कोर्ट में मुकदमा नहीं करना चाहिए। अगर स्वीकार हो, तो आप मान सकते हैं कि यह कर्मफल है।

इस कानून से तो आप एक घंटा भी नहीं जी सकते। जो भी चोर चोरी करे, उसको ईनाम दिलवाओ। अपने–अपने नगर में अहमदाबाद में, उदयपुर में, जबलपुर में, मुम्बई में, दिल्ली में एक घंटे के लिए यह नियम लागू कर दो कि जो भी चोर चोरी करेगा, उसको ईनाम मिलेगा, फिर देखो क्या होता है। आपका जीना मुश्किल हो जायेगा। इसलिए यह बात सत्य नहीं है।

हमें जो सुख–दुःख मिलता है, उसके दो भाग हैं:–

(एक) व्यक्ति ने अपने कर्मों का फल है। और

(दूसरा) अन्यों के कारण से भी हमको बिना हमारे दोष (गलती) के दुःख मिलता है।

अगर पूरा का पूरा हमारे ही कर्मों का फल मान लिया जाए तो अपराधी तो दुनिया में कोई भी नहीं है। तो फिर किसी पर कोर्ट केस क्यों?

किसी सेठ के यहाँ पर चोरी हुई, और उसे यह माना जाए कि सेठ के किसी पूर्वजन्म का दोष होगा। फिर चोर के ऊपर मुकदमा क्यों? उसने तो कर्म का फल दिया। उसको तो वेतन दो, जैसे न्यायाधीश को दिलवाते हैं। नहीं दिलाएंगे।

सेठ के यहाँ चोरी हुई, यह उसका कर्म–फल नहीं है, तो फिर वह क्या है? इसका नाम है– 'अन्याय'। सेठ के साथ अन्याय हुआ। उसने मेहनत से धन कमाया, अपने धन की सुरक्षा भी की। तब भी चोर ताला तोड़कर सामान ले गए। यह सरासर अन्याय है। इससे सिद्ध हुआ कि, जितने भी जीवन में सुख–दुख मिलते हैं, वो सब के सब हमारे कर्मों का फल नहीं होते हैं। कुछ कर्मों का फल है, और कुछ अन्याय से भी हमें मिलता है।

अन्याय किसको कहते हैं? **बिना कर्म किए दुःख देना, अथवा किए गए कर्म के अनुसार फल नहीं देना, कर्म से अधिक फल दे देना, या कम फल देना, उसका नाम अन्याय है और कर्म के अनुसार फल दे देना, वो न्याय है।**

थोड़े दूसरे शब्दों में और खोल देते हैं कि:–

बिना अपराध के, बिना दोष के, किसी को दुःख देना अथवा सुख दे देना, भी अन्याय है।

दुःख वाला उदाहरण पकड़कर चलते हैं। बिना अपराध के किसी को दुःख दे देना अन्याय है। और अपराध करने पर उसके अपराध के अनुसार उसको दंड देना, यह न्याय है।

क्या आप लोग मानते हैं कि, संसार में अन्याय होता है? होता है। इसका अर्थ ये हुआ कि, **कुछ घटनाएं संसार में ऐसी**

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

सत्यासत्य का विचार व चिन्तन

विकासवाद बनाम वैदिक धर्म

● मनमोहन कुमार आर्य

विकासवाद का सिद्धान्त संसार में ऐसे समय पर आया जब विज्ञान विकासशील अवस्था में था। विकासवाद का सिद्धान्त इंग्लैण्ड में जन्में चार्ल्स राबर्ट डारविन (जन्म 12 फरवरी 1809,तथा मृत्यु 19 अप्रैल, 1882) ने दिया। इसका आधार क्या था? इसका उत्तर यही है कि उनकी कल्पनायें, विचार, सृष्टि की उत्पत्ति का अध्ययन, व उनके अपने निष्कर्ष। वह यह तो जानते थे कि यह सृष्टि हमेशा से इसी रूप में विद्यमान नहीं है अपितु इतिहास की दृष्टि से हजारों, लाखों व उससे भी पूर्व बनी है परन्तु कब व कैसे बनी इसका कोई विज्ञान व बुद्धि संगत ठोस सिद्धान्त न तो उस समय के इतिहास अथवा बाइबल में ही उपलब्ध था और न कहीं अन्यत्र, अतः उन्होंने व उनके सभी समकालीन पश्चिमी विद्वानों ने बाइबिल के परिप्रेक्ष्य में कल्पनायें कीं। वैदिक मत के सत्य को स्वीकार करना उन्हें अभिप्रेत नहीं था अन्यथा उनके धार्मिक सिद्धान्तों को खतरा होता। श्री डारविन भारत आये नहीं और भारत में जो वैदिक साहित्य, जिसमें वेद और दर्शन भी शामिल हैं, उससे वह अनभिज्ञ थे अथवा उन्होंने सोच–समझकर उसकी अपेक्षा की। यह आश्चर्य की बात है कि उनके जन्म के ठीक 16 वर्ष बाद गुजरात की धरती में टंकारा नामक ग्राम में एक औदीच्य ब्राह्मण कुल में बालक मूलशंकर जो बाद में महर्षि दयानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए, जन्म हुआ था। महर्षि दयानन्द ने अपने शैशव काल में अपने परिवार में जब तर्क व बुद्धि की तुला पर समझ में न आने वाली मूर्तिपूजा आदि धार्मिक परम्पराओं को देखा व समझा तो उन्होंने उन मान्यताओं के विरुद्ध एक प्रकार का विद्रोह कर दिया और सत्य, ज्ञान व विद्वान की खोज में निकल पड़े। **महर्षि दयानन्द ने भी इस सृष्टि की उत्पत्ति के सिद्धान्त का वेदों व वैदिक साहित्य के आलोक में अध्ययन किया और सन् 1863 व उसके बाद अनेक अवसरों पर उन्होंने अपने ग्रन्थों, सन्ध्या, सत्यार्थ प्रकाश एवं ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वार्तालाप, शास्त्रार्थ आदि के माध्यम से सृष्टि विज्ञान का स्वरूप प्रस्तुत किया जो बुद्धिसंगत, तर्कसंगत, अकाट्य होने के साथ ज्ञान व विज्ञान की कसौटी पर भी खरा है।** हम पहले महर्षि दयानन्द के सिद्धान्त को जान लेते हैं। **महर्षि दयानन्द के अनुसार जगत में 3 पदार्थों का अस्तित्व सदा–सर्वदा, अनादिकाल से है जिन्हें ईश्वर जीव व प्रकृति के नाम से जाना जाता है और वह तीनों नाम हमें शाश्वत दैवीय साहित्य "वेद" से मिले हैं।** इसके ईश्वर व जीव तो चेतन पदार्थ हैं जबकि प्रकृति जड़ व अचेतन अथवा निर्जीव पदार्थ तथा तत्व है। सृष्टि की रचना से पूर्व यह प्रकृति कारण अवस्था में होती है जो अत्यन्त सूक्ष्म कणों, जो ऊर्जा के कण हैं, सत्व, रज व तम इन प्रकृति के गुणों की साम्यावस्था है। यह सृष्टि निर्माण की सामग्री है। यह प्रकृति में ही उन्नति, विकास, स्वयं नहीं अपितु ईश्वर के द्वारा, होकर यह कार्य सृष्टि या सारा जगत् जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, अनेकानेक ग्रह व उपग्रह, नक्षत्र, आकाश, गंगाएं, निहारिकायें, अग्नि, जल, वायु और आकाश आदि हैं, बनते हैं। प्रश्न मात्र यह है कि क्या यह अपने आप बने हैं या उन्हें किसी ने बनाया है। **विज्ञान का एक नियम है कि प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। अतः प्रतिक्रिया के पीछे क्रिया और क्रिया के पीछे एक चेतन कर्ता का होना आवश्यक है अन्यथा क्रिया का होना असम्भव है।** इसे आप एक प्रकार से समझे लें कि रोटी के बनाने का सारा सामान या सामग्री रसोई गृह में उपलब्ध है। इन सब सामान से एक दिन, महीने, एक वर्ष या अनेकों वर्षों में भी अपने आप रोटी नहीं बन सकती। रोटी कब बनेगी जब एक चेतन सत्ता, मनुष्य, स्त्री, वा पुरुष जो रोटी बनाना जानता है, वह उचित मात्रा में रोटी बनाने के लिए आवश्यक सामग्री लेकर विधिपूर्वक या ज्ञानपूर्वक रोटी को बना। तभी रोटी बनेगी अन्यथा कभी नहीं बन सकती। इसी प्रकार कारण प्रकृति अर्थात् सूर्य, चन्द्र व पृथिवी आदि एक चेतन सत्ता के द्वारा ही बना गये हैं। ऐसा ही वर्णन वेदों में है और इसी सिद्धान्त को वेद और वैदिक ग्रन्थों के आधार पर स्वामी दयानन्द जी ने सविस्तार व सयुक्तिक प्रस्तुत किया है। महर्षि दयानन्द जी को तो वेद और वैदिक साहित्य सृष्टि रचना व उसकी उत्पत्ति के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने के लिए मिल गये और उन्होंने विज्ञान की नीति व रीति से सृष्टि रचना के सिद्धान्त का प्रतिपादन कर दिया **परन्तु चार्ल्स डारविन सहित पश्चिम जगत् के अन्य विद्वानों के पास वेदों का ज्ञान नहीं था अतः उन्हें कल्पनायें करनी पड़ीं और वह कल्पनायें सत्य व यथार्थ से विरुद्ध, उससे हटकर व अटपटी सी, ज्ञान की बुद्धि तथा तर्कहीन सी उन्होंने प्रस्तुत कीं।** पश्चिमी जगत् को वेदों का सिद्धांत पता नहीं था अतः वहां के लोगों व वैज्ञानिकों ने चार्ल्स डारविन की मान्यता को वैज्ञानिक सिद्धान्त मान लिया जबकि यह सत्य के पूर्णतया विपरीत था व है। आज भी इसको निर्भ्रान्त सिद्ध नहीं किया जा सका है। इससे पता चलता है कि कई बार बड़े बड़े ज्ञानी, विद्वान् व वैज्ञानिक भी ग़लत बात को स्वीकार कर लेते हैं जबकि वह तर्क व प्रमाणों से पूरी तरह से सिद्ध नहीं होती। परन्तु खेद इस बात का है कि असली वैज्ञानिक अपनी बात व मान्यता की सतत खोज करते रहते हैं और उसे अन्तिम परिणाम पर पहुंचाते हैं परन्तु हमारे विदेशी वैज्ञानिक बन्धुओं ने सृष्टि उत्पत्ति व रचना के वैदिक सिद्धान्त की भली–भांति परीक्षा करना उचित नहीं समझा, यह चिन्तनीय है। ऐसा उन्होंने क्यों किया इससे भ्रान्ति व भ्रमों को आश्रय मिलता है। इसका कारण उनकी भारत विरोधी धारणा प्रतीत होती है। जब अपने देश के लोग ही विदेशियों का अन्धानुकरण करें तो विदेशी वैज्ञानिक, समाज शास्त्री व धर्मवेत्ता भी भारतीय वेदों के सत्य सिद्धान्तों की उपेक्षा करें, तो इसमें आश्चर्य कैसा?

विकासवाद क्या है? विकासवाद शब्द पृथिवी एवं जैविक रचना या उत्पत्ति व उसके विकास अथवा उन्नति के लिए प्रयोग होता है। विकासवाद के सिद्धान्त के जनक चार्ल्स राबर्ट डारविन महाशय हैं। डारविन एक वैज्ञानिक थे। उन्होंने जड़ एवं जैविक सृष्टि की रचना व उत्पत्ति पर विचार किया। उनके ज्ञान में बाइबिल के सिद्धान्त अवश्य विद्यमान थे जो विज्ञान के अनुकूल व अनुरूप नहीं थे। उन्होंने अनुमान से कार्य लिया और सोचा कि इस ब्रह्माण्ड को बनाने वाला तो कोई दिखाई नहीं देता और न वह उसकी बुद्धि में ही आ सका, अतः स्वाभाविक था कि उन्होंने सृष्टि को स्वतः, स्वयं, अपने आप निर्मित मान लिया और कहा कि धीरे–धीरे, क्रमिक रूप से, स्वतः विकास होता है और यह ब्रह्माण्ड और जैविक सृष्टि अस्तित्व में आ जाती है। **हमारा मानना है कि यदि सृष्टि के आदि में भारत में ईश्वर ने आदि चार ऋषियों को वेदों का ज्ञान न दिया होता तो हमारे पूर्वजों को भी काफी मशक्कत करनी पड़ती और वेदों के आधार पर जो सिद्धान्त हमारे सामने तब आये और आज भी विद्यमान हैं, वह कदापि न होते।** भारत का बच्चा बच्चा कभी वेदों की शिक्षा के अनुसार यह जानता व मानता था कि ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक, नित्य, अनादि, अजन्मा, अनन्त, अमर, जीवात्मा का माता–पिता–आचार्य–राजा और गुरु, उसने जीवों को पूर्व जन्मों का आधार पर उनके सुख व दुख रूपी कर्मों के फलों के लिए ही अपनी सामर्थ्य साफल्य व जीवों के सुख के लिए सृष्टि की रचना की है। यदि डरविन ने प्रयास किया होता तो वह कम से कम मनुस्मृति को ही प्राप्त कर सृष्टि की रचना के वैदिक सिद्धान्त को जान सकते थे, तब यदि वह पक्षपात न करते तो ईश्वर का स्वरूप भी उन्हें समझ में आ जाता और सृष्टि की उत्पत्ति से जुड़े हुए सभी प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर उन्हें मिल जाते। भारत में उनके देश की सरकार थी और इंग्लैण्ड में प्रो. फ्रेडरिक मैक्समूलर आदि अनेक वेदों के जानकर मौजूद थे जिनसे वह जानकारी ले सकते थे स्वयं अथवा भारत आ सकते थे। एक वैज्ञानिक होकर उन्होंने यह कार्य क्यों नहीं किया? यह आश्चर्यजनक है और सन्देह व शक पैदा करता है। इससे यह भी संकेत मिलता था कि उन्होंने सत्य की खोज के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किए। ऐसी ही शिकायत हमें देश व विदेश के वैज्ञानिकों से भी होती है। **हमारे पश्चिमी वैज्ञानिकों ने जड़ प्रकृति का अध्ययन किया व अनेकानेक नियमों को खोज निकाला, उन्हें विज्ञान व गणित के माध्यम से प्रस्तुत किया जिससे आज हम विज्ञान के शिखर पर पहुँच गये हैं। हम सभी वैज्ञानिकों का उनकी खोजों व आविष्कारों तथा अनेकानेक कम्प्यूटर, सूचना के यन्त्र आदि उपकरण प्रदान करने के लिए उन्हें साधुवाद भी देना चाहते हैं परन्तु हमें उन वैज्ञानिकों पर आश्चर्य होता है जो परमाणु बनाने वाली अदृश्य कारण सत्ता ईश्वर जो एक निराकार तत्व है, उसका संकेत मिलने पर भी उसे स्वीकार नहीं करते।** क्या इलेक्ट्रान, प्रोटान तथा न्यूट्रान आदि प्रकृति के (सत् रज व तम्) गुणों में स्वयं परस्पर नाना प्रकार के हाइड्रोजन, हीलियम व अन्य सभी तत्व वा सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों व पृथिवी एवं पृथिवीस्थ पदार्थ बनाने की क्षमता है? कदापि नहीं है। यदि नहीं है, तो फिर या तो वह इसका सन्तोषजनक उत्तर दें या ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करें। **ईश्वर को स्वीकार न करने से उनका पक्षपातपूर्ण होना प्रतीत होता है।**

हमने उपरोक्त विचार विकासवाद की जिन मान्यताओं व सिद्धान्तों को दृष्टिगत

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

thearyasamaj.org

भारत की प्रथम महिला अन्तरिक्ष यात्री

कल्पना चावला

● डॉ. रेखा चौहान

परिवार समाज तथा राष्ट्र निर्माण में नारी-जाति की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। भारत वर्ष में तो प्राचीन काल से ही नारियों ने न केवल विद्या प्राप्त करने में अपितु हर क्षेत्र में अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ी है।

इस शृंखला में अन्तरिक्ष में उड़ान भरकर आकाश-परी बन विश्व को स्तब्ध करने वाली कल्पना चावला ने इसी भारत भूमि पर जन्म लेकर अपना तथा नारी जाति का नाम गौरवान्वित किया है। जिस बात को प्रायः सपना या कल्पना समझा जाता था, कल्पना चावला ने उसी को साकार रूप प्रदान कर उच्चतम स्थान प्राप्त किया है।

कल्पना चावला का जन्म 1 जुलाई 1961 ई. को हरियाणा प्रदेश के करनाल नगर में एक मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम श्री बनारसी लाल चावला तथा माता का नाम श्रीमती संयोगिता देवी है। कल्पना चावला की प्रारम्भिक शिक्षा करनाल के टैगोर स्कूल में हुई। इसके पश्चात् वहीं के दयालसिंह कॉलिज से प्री. इंजिनियरिंग की शिक्षा उत्तीर्ण की। "एसेस्पेस" में इन्होंने बी.ई.की डिग्री पंजाब इंजीनियरिंग कॉलिज से प्राप्त की। कल्पना चावला प्रारम्भ से ही अत्यन्त परिश्रमी तथा अपने विषय में योग्यता पूर्वक सफलता प्राप्त करने का लक्ष्य लेकर चली थी। विद्यार्थी जीवन से ही उसने अपने जीवन का लक्ष्य 'सादा-जीवन-उच्च विचार' बना लिया था। उसके हृदय में अभाव ग्रस्त लोगों तथा दीन दुखी गरीबों के प्रति बचपन से ही बहुत लगाव था। इसलिए वह अपनी कमाई का आधा भाग जरूरतमन्द बच्चों पर ही खर्च करती थी।

यह उक्ति तो जगत प्रसिद्ध है कि *'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'* इसके अनुसार कल्पना भी बचपन से ही चाँद-तारों को छूने तथा आकाश की सैर करने की कल्पना में ही डूबी रहती थी। जब भी समय मिलता वह अपनी कापी के पन्नों पर आकाश में चमकने वाले अनेक नक्षत्रों, चाँद, तारों तथा अन्यान्य ग्रहों के काल्पनिक चित्र बनाकर उन्हें भिन्न-भिन्न कोणों से देखती, कभी उनकी ऊँचाई को नापती, कभी एक दूसरे ग्रहों से उनके अन्तर की कल्पना करती। कभी किसी ग्रह पर जाकर उसकी वस्तु स्थिति का निरीक्षण करने की बात मन ही मन सोचती। इस प्रकार से घंटों उन विचारों में खोई रहती कि क्या किसी दिन मैं स्वयं उन लोक-लोकान्तरों में स्थित ग्रह-नक्षत्रों का अपनी आँखों से प्रत्यक्षीकरण कर मानव-समाज को उनकी वास्तविक स्थिति से अवगत करा सकूँगी? कई बार तो वह इस ढंग की बातें करती जैसे (वह) चन्द्र लोक में ऊँचे तथा समतल स्थानों को देख रही हो। उसे लगता जैसे वहाँ कहीं तो ऊँची-ऊँची पर्वत चोटियाँ हैं।, कहीं रेत के अम्बार हैं-कहीं लम्बे चौड़े मैदान तथा कहीं पानी से लबालब भरी झीलों में ऊँची-ऊँची लहरें हिलोरे ले रहीं हैं। केवल एक नहीं कई ग्रह नक्षत्रों का ऐसे बखान करती जैसे सब कुछ उसकी आँखों के सामने घट रहा हो। कई बार खाने की थाली सामने रक्खी है, और वह मंगल ग्रह की सैर कर रही है, दो तीन बार टोकने पर माँ या बहनों से कहती आज तो मैं अमुक ग्रह के अमुक स्थान पर जा रही थी- आपने तो सारा मजा ही किरकिरा कर दिया। इस प्रकार प्रायः वह सब कुछ भूलकर घन्टों समाधिस्थ सी होकर अपने ही विचारों में डुबी रहती।

कल्पना के पिता की इच्छा थी, कि उनकी बेटी डॉक्टर या अध्यापिका बनकर समाज सेवा कर अपना और परिवार का नाम ऊँचा करे, परन्तु कल्पना चावला की कल्पना और विचार तो अन्तरिक्ष में उड़ान भरकर चाँद तारों की सैर कर विविध ग्रह नक्षत्रों का पता लगाकर धरती के लोगों को उनसे परिचित कराना था। वह तो केवल गगन-परी और उड़न परी बनने के सपने को साकार करने की धुन में ही मगन रहती थी।

जब कल्पना ने *'एरोनाटिक्स'* में प्रवेश लिया तो एक अनुभवी प्रोफेसर ने उसे समझाने की कोशिश की-कि यह क्षेत्र (आकाश में उड़ान करने वाला) लड़कियों के लिये उचित नहीं है, बल्कि समय और पैसे को बर्बाद करना है परन्तु कल्पना इस बात को अनसुनी करके अपने निश्चय पर ही अडिग रही और अपने आपको उसी दिशा में आगे बढ़ाने के कार्यक्रम को चालू रक्खा। उसने इस सूत्र को अपने मन में दृढ़ कर लिया था- *'जहाँ चाह वहाँ राह।'* इसके बाद उसने अमेरिका के 'टैक्सास विश्वविद्यालय' से मास्टर डिग्री प्राप्त की। तत्पश्चात् 1984 ई. में 'कोलोरेडो विश्वविद्यालय' से उसने डाक्टरेट की उपाधि उत्तम श्रेणी में प्राप्त की। उक्त विश्व विद्यालयों के प्रोफेसर कल्पना की प्रतिभा और लगन से बहुत प्रभावित थे, अतः उसे निरन्तर आगे बढ़ने के लिये उत्साहित तथा प्रेरित करते थे।

इस प्रकार अन्तरिक्ष में उड़ान भरने संबन्धी कठिन और सर्वोच्च उपाधियाँ प्राप्त कर कल्पना ने उस दुर्गम पथ को पार कर लिया जिसकी वह बचपन से कल्पना किया करती थी। इस अकल्पनीय परिश्रम का यह शुभ परिणाम निकला कि 1988 में कल्पना चावला को अमेरिका के सर्वोच्च 'अन्तरिक्ष अनुसन्धान केन्द्र' 'नासा' में नियुक्ति का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिसे प्राप्त करने के लिये विश्व के धुरन्धर वैज्ञानिक कठिन परिश्रम करने पर भी उससे वंचित रह जाते हैं, उसे कल्पना ने अपनी प्रतिभा के बल पर साकार कर दिखाया और अन्त में 1994 ई. में कल्पना की कल्पना साकार रूप धारण कर उसके कदमों को चूमने के लिये प्रस्तुत हुई। इसी वर्ष इन्हें नियुक्त समिति ने सर्वसम्मति से अन्तरिक्ष यात्रा के लिये चुना। 19 नवम्बर, 1997 का दिन समस्त भारतीयों के लिये अविस्मरणीय एवं गौरव का दिन है, क्योंकि इसी दिन कल्पना चावला ने भारत की इस होनहार बेटी ने प्रथम महिला अन्तरिक्ष यात्री के रूप में आकाश में उड़ान भरी थी।

सन् 1988 में कल्पना चावला ने 'मि. जीन पियरे हैरीसन' से विवाह कर लिया। हैरीसन एक हँस मुख तथा सरल स्वभाव का युवक था, तथा कल्पना को हर प्रकार की सहायता करने तथा उसे आगे बढ़ाने में सदैव तत्पर रहता था। कल्पना भी अपने इस वैवाहिक सम्बन्ध से पूर्णतया सन्तुष्ट थी।

जनवरी 2003 में कल्पना चावला को दूसरी बार पुनः अन्तरिक्ष अभियान के लिये चुना गया। इस बार उसे (कल्पना को) एक विशेषज्ञ के रूप में विशेष उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिये इस अभियान में सम्मिलित किया गया था। इस आकाशीय अभियान में कुल सात यात्री अन्तरिक्ष यात्रा पर जा रहे थे। इस यात्रा का उद्देश्य अन्तरिक्ष में 'भौतिकी और जीव विज्ञान' के क्षेत्र में अनुसंधान करना था। इस दल ने अपने कार्य में सफलता भी प्राप्त की, जैसा कि अन्तरिक्ष से मिलने वाली सूचनाओं और चित्रों से ज्ञात हो रहा था। सोलह दिन की सफल-यात्रा के साथ यह दल 1 फरवरी, 2003 को भारतीय समय के अनुसार सायंकाल सात बजकर 46 मिनट पर अमेरिका की भूमि पर (वह अन्तरिक्ष यान) उतरना था। वहाँ उन यात्रियों की सुरक्षा और विश्राम का पूर्ण प्रबन्ध भी कर लिया गया था। अमेरिका में तो इस दल की स्वागत की तैयारी हो ही रही थी, परन्तु भारत की भूमि पर आबाल वृद्ध नर-नारी भी बेसब्री से उस शुभ घड़ी का इन्तजार कर रहे थे-कि कब यान उतरे, कब यात्रियों का स्वागत किया जाय और कब कल्पना के अपूर्व शौर्य को भारतवासी अपनी उस महान वीर बेटी का विभिन्न तरीकों से जश्न मनाकर अपने दिल के अरमानों को पूरा करें।

... परन्तु हा हन्त! दुर्दैव की करनी देखिए-जब यान पृथ्वीतल पर लगभग 7-8 मिनट बाद ही सकुशल उतरने वाला था-तभी... उस अन्तरिक्ष यान में अचानक... विस्फोट हो गया, और यान में सवार सभी यात्रियों के साथ... कल्पना भी विश्व इतिहास में सदा के लिये अमर हो गई। भारतवासी अपने दिल मसोस कर रह गये। लिखते हुए लेखनी काँप रही है, दिल धड़क रहा है, आँखों के आगे अंधेरा छा गया है-सोचा था क्या-क्या हो गया? इस अनहोनी दुर्घटना से सारा विश्व स्तब्ध रह गया। भारतीयों की आँखों में आँसुओं केवल आँसुओं का सैलाब था। वाणी-मौन थी-आकाश निशब्द था। विधि का यही विधान था। दिलों की पीड़ा आँखों के रास्ते पिघल कर तन मन को उद्वेलित कर रही थी।

कभी समय था जब कल्पना - अपनी कल्पना को साकार रूप देने को कटिबद्ध थी, पर अब तो स्वयं कल्पना-हमारे लिये कल्पना बनकर अमर लोकवासिनी हो गई। अब तो केवल हम उसके महान कार्यों का स्मरण कर श्रद्धांजलि ही अर्पित कर सकते है। विश्व इतिहास में कल्पना की प्रतिभा, लगन, साहस, परिश्रम, और दृढ़ संकल्प की गौरव गाथा सदा स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगी। आगामी पीढ़ी के लिये वह भारत पुत्री एक ऐसा आदर्श छोड़ गई है, जिसे प्राप्त करने के लिये नव युवक और नव युवतियाँ प्रेरणा पथ पर सदा अग्रसर होते रहेंगे।

हार्दिक श्रद्धांजलि।

"जन्म न लेती यदि भू पर तू
कवि के गीत अधूरे रहते।
दर्शन शास्त्र मूक बन जाता,
जग के स्वप्न न पूरे होते।।
अपना जीवन किया समर्पित
मानवता की आन निभाकर।
अमर रहेगी कलित कल्पना,
जब तक जग में चन्द दिवाकर।।

द्वारा मानव संकल्प सोसायटी (रजि.)
पानीपत-132103
मो. 090345-074413

thearyasamaj.org

बृहद् विमान शास्त्र–शक्ति अधिकरण

● कृपाल सिंह वर्मा

किसी प्राचीन किले के खण्डहरों को देखकर ही उसकी भव्यता का आभास हो जाता है। सन् 1918 में पूज्य स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक को राजकीय संस्कृत पुस्तकालय बड़ौदा से महर्षि भरद्वाज द्वारा सूत्र रूप में रचित "यन्त्र सर्वस्व" ग्रन्थ के वैमानिक प्रकरण के कुछ पन्नों की Transcript copy मिली जिसको स्वामी जी ने 'बृहद विमानशास्त्र' का नाम दिया। इस पुस्तक का श्लोकबद्ध भाष्य यति बोधानन्द ने किया था। इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद स्वामी जी ने 19–09–1958 ई. को पूर्ण किया। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ने इस पुस्तक को फरवरी 1959 ई. को प्रकाशित किया।

शक्ति अधिकरण में विमान की शक्तियों का वर्णन किया गया है–

विमान की सात शक्तियां होती हैं–

(1) उद्‌गमा शक्ति (2) पन्जरा शक्ति (3) सूर्यशक्त्यपर्षणी (4) परशक्त्यापर्षिशी (5) द्वादश शक्तियां (6) कुष्टिणी (7) मूल शक्ति

महर्षि भारद्वाज द्वारा रचित 'यन्त्र सर्वस्व' ग्रन्थ में कहा है–

शक्ति प्रकट करने वाले सात यन्त्र निम्नलिखित हैं–

(1) तुन्दिल (2) पन्जर (3) अंशुप (4) अपकर्षक (5) सान्धनिक (6) दार्पणिक (7) शक्ति प्रसवक

कौन से यन्त्र से कौन सी शक्ति होती है।

(1) तुन्दिल यन्त्र से उद्‌गमा शक्ति प्रकट होती है।
(2) इसी प्रकार पन्जर यन्त्र से पन्जरा शक्ति
(3) अंशुप यन्त्र से सूर्यशक्तिपर्षिणी शक्ति
(4) अपकर्षक यन्त्र से पर शक्तिपकर्षिणी
(5) सान्धनिक यंत्र से द्वादश शक्तियां
(6) दार्पणिक यन्त्र से कुण्टिणी नामक शक्ति
(7) शक्ति प्रसवक यन्त्र से मूल शक्ति प्रकट होती है।

उपरोक्त वर्णन "यन्त्रसर्वस्व" नामक पुस्तक आधार पर किया गया है।

इसके पश्चात बोधानन्द जी "शौनक सूत्र" नामक पुस्तक के आधार पर विमान शक्तियों का वर्णन करते हैं।

शौनक सूत्र के आधार पर विमान की सात शक्तियां निम्नलिखित हैं–

(1) अदिति (2) क्ष्मो (3) वायु (4) सूर्य (5) इन्दु (6) अमृत (7) अम्बर

(1) **अदिति** द्यौ को कहते हैं। आधुनिक विज्ञान में द्यौ को Energy कहते हैं। ऊर्जा से ही विमान ऊपर को जाता है। इसे उद्‌गमा शक्ति कहते हैं।

(2) क्ष्मा पृथिवि को कहते हैं। वैदिक विज्ञान में 'द्यौपृथिवी' शब्द का प्रयोग अक्सर होता है। यहाँ द्यौ का अर्थ है Energy तथा पृथिवि शब्द का अर्थ है Matter। वायुयान की पक्षी रूप बनावट तथा पृथ्वी की आकर्षण शक्ति, इन दो कारणों से विमान पृथ्वी पर उतरता है। वैदिक विज्ञान की भाषा में इसे क्ष्मा अर्थात पन्जरा शक्ति कहते हैं।

(3) शौनक सूत्र में वर्णित वायु शक्ति को वैदिक विज्ञान की भाषा में सूर्यशक्तिपकर्षिणी कहते हैं। आज भी ताप कम करने के लिए वायु का प्रयोग किया जाता है। वायु ही सूर्य के ताप को कम करने वाली शक्ति है। इसी आधार पर Refrigerator काम करता है।

(4) सूर्य– सूर्य सभी प्रकार की ऊर्जाओं का मूल उद्‌गम है। विद्युत् ऊर्जा का मूल उद्‌गम सूर्य है। विद्युत् शक्ति से तो बारह प्रकार के कार्य किये जाते हैं उसके मूल में सूर्य शक्ति है। सूर्य से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से विद्युत् ऊर्जा प्राप्त करते हैं। इस वैदिक विज्ञान की भाषा में विद्युत् द्वादश शक्ति कहते हैं।

(5) इन्दु– इन्दु चन्द्रमा को कहते हैं। चन्द्रमा सूर्य की उष्मा को सोख लेता है तथा शीतल प्रकाश ही पृथ्वी पर भेजता है। इसी प्रकार वायुयान में एक परशक्ति अपकर्षक यन्त्र होता है जो वायुयान में स्थित मूल शक्ति का सम्पर्क यान की अन्य शक्तियों से काट देता है। वायुयान में मूल शक्ति के रूप में विशेष प्रकार के तेल से चलने वाला शक्तिशाली इंजन होता है। इंजन से इलैक्ट्रिक जनरेटर चलता है। जनरेटर से उत्पन्न विद्युत् से अनेक प्रकार के कार्य होते हैं। पर शक्ति अपकर्षक यन्त्र यानी एक प्रकार का कलच सिस्टम मूल शक्ति से अन्य शक्तियों को अलग कर देता है।

(6) अमृत– अमृत जल को कहते हैं। वैदिक विज्ञान की भाषा में 'जल गन्ध हीन पदार्थों को कहते है'। इन पदार्थों से कुष्टिणी शक्ति यन्त्र का निर्माण किया जाता है जो ग्रीष्मकालीन कुलिका शक्ति के नाशार्थ प्रयोग किया जाता है। कुलिका नामक शक्ति वायु मण्डल में प्रकट होकर अत्यन्त तीव्र ताप उत्पन्न करती है जैसा कि कहा है–

"व्योमयानंग यंत्रेषु कुष्टिशीशक्ति यन्त्रकम्। ग्रीष्मकालीन कुलिका शक्ति नाशार्थमुच्चते।।"

(7) अम्बर– अम्बर मूल शक्ति को कहते हैं। विमान में एक मूल शक्ति के रूप में शक्तिशाली उष्मा इंजिन होता है। इस ही इंजिन की शक्ति से विमान के अन्य प्रकार की विद्युत् आदि शक्तियां प्रकट की जाती हैं।

"सौदायिनी कला" नामक पुस्तक में विमान की शक्तियों का विवरण इस प्रकार है–

"य, ल, य, र, स, व, न, शक्तियां विमान की हैं। **अदिति**–उद्‌गमा है। ल पृथिवी पन्जरा कही जाती है। य वायु सूर्यशक्त्यपकर्षिणी सूर्य–विद्युत् द्वादशक कही गई हैं। स इन्दु परशक्त्यपकर्षिणी, **व** जल शक्ति–कुष्टिणी कही जाती है। **न** अम्बर मूल शक्ति कही है।"

"क्रिया सार" नामक विमान पुस्तक में विमान शक्तियों का विवरण इस प्रकार है–

"विमान का ऊपर जाना उद्‌गमा शक्ति से होता है।

विमान का नीचे आना पन्जरा शक्ति से। घर्षण शक्ति अपकर्पिणी है। घर्षण के कारण ही एक शक्ति दूसरी से जुड़ती है।

सूर्य किरणों की उष्णता को हटाने वाली शक्ति को सूर्यशक्तिपर्षिणी कहते हैं। परशक्तिकर्षिणी से सब शक्तियों का रोक देना होता है। परशक्त्यपर्षक यन्त्र वायुयान का Clutch plate system होता है।

विद्युत् द्वादशक शक्ति द्वारा विमान का विचित्र गमन होता है। अर्थात मूल शक्ति इंजिन से जनरेटर द्वारा विद्युत् धारा उत्पन्न कर इससे विभिन्न प्रकार के कार्य करना होता है। मूल शक्ति से विमान की विभिन्न शक्तियों का संचालन होता है।

इस प्रकार विभिन्न वैमानिक ग्रन्थों के आधार पर यति बोधानन्द ने अनेक प्रकार से वैमानिक शक्तियों का विवरण प्रस्तुत किया है।

253 शिवलोक, कंकरखेड़ा, मेरठ

☞ *पृष्ठ 03 का शेष*

ध्यानयोग में मूर्ति ...

और चेतन को जड़ मान लेना उसकी अपनी निजी मान्यता है। उसकी ऐसी मान्यता, भावना, विश्वास श्रद्धा का दूसरों पर कोई फर्क नहीं पड़ता। किसी की मान्यता को, कोई रोक नहीं सकता। जब तक उसकी मान्यता दूसरों के लिये कोई बाधा उत्पन्न न करे। किसी की गलत भावना, श्रद्धा मान्यता से वस्तु–पदार्थ का स्वरूप नहीं बदल जाता।

वेद और वैदिक संहिताओं में मूर्ति का अर्थ–मूर्तिवत्त, कर्कष, कठोर, जठर,क्रूर, दृढ़ और निष्ठुर है। ध्यान योग और मूर्ति पूजा पद्धति में विरोध है। इस भिन्नता को एक अल्पज्ञ भी जानता है। मूर्ति पूजा में देवताओं का आवाहन और विसर्जन, भोग चढ़ाना, भोग लगाना, द्वीप सुगंध, आरती करना, नाचना गाना, घड़ियाल बजाना, जैसी क्रियाओं का ध्यानयोग में निषेध और वर्जन है। ध्यान रखो, चल–गति से मन नहीं टिकता। जड़पूजा में देवता कहाँ से आये थे! कहाँ चले गये!! ईश्वर कहीं आता जाता नहीं!!! चाँदी की मूर्तियाँ, हीरे–मोती–जवारात जड़ित, छत्र, मुकुट, आभूषण और बर्तन आदि, जिनकी चौकीदारी और तालाबन्दी रहती है। जबकि ध्यान योग में उपासना किसी व्यक्ति–पदार्थ–प्रकृति की नहीं, केवल ईश्वर की ही की जाती है।

जड़ साकार मूर्ति ईश्वर के स्थान नर किसी स्त्री–पुरुष आदि की मूर्ति लगाई जाती है। क्या ईश्वर के स्त्री–पुरुष का कोई लिंग भेद है? पाषाण–सोने, चाँदी–हीरेमोती, आभूषणों, अमूल्य वस्त्रों से श्रृंगारित मूर्ति को देखकर अनेकों विचार, भावनायें, चंचल मन में उत्पन्न होते हैं। परन्तु इन भावनाओं से क्रिया और ईश्वर का भाव नहीं होता। क्योंकि ये यथार्थ में शाश्वत सत्य नहीं हैं। यथार्थ न होने से विचार की क्रिया शक्ति, अनुशरण शक्ति, भी घट जाती है। इससे तथाकथित ईश्वर भक्ति भी निष्फल रह जाती है।

अतः जड़ मूर्ति पूजा से द्रष्टा, दृश्य और ध्येय, परस्पर संयुक्त होकर ध्यान योग से वंचित रहते हैं। ''**योग श्चित्तवृति निरोघः**'' निराकार को साकार, जड़ को चेतन, जड़ मूर्ति में ईश्वर की मान्यता, भावना, आस्था विश्वास में अन्य का भाव, विपर्ययवृति और मिथ्या ज्ञान है। ''**न तस्य प्रतिमा अस्ति**'' वेद। जड़ स्थूल प्रतिमा, अपनी सृष्टि के लिए मूर्तिकार पर आश्रित है। मुन महाराज ने धर्म का श्रुति सम्मत होना आवश्यक कहा है।

जडौदा हाउस
कोटा (राज.)

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 04 का शेष

तथाकथित चार–धाम....

लंका से चले, आकाशमार्ग में विमान पर बैठ आयोध्या को आते थे, तब सीताजी से कहा था कि–

'अत्र पूर्व महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः।

सेतुबन्ध इति विख्यातम्।। ' (वाल्मीकि रा० लंका कां०)

'हे सीते! तेरे वियोग से हम व्याकुल होकर घूमते थे, और इसी स्थान में चातुर्मास किया था। और परमेश्वर की उपासना ध्यान भी करते थे। वही जो सर्वत्र विभु–व्यापक देवों का देव 'महादेव' परमात्मा है, उसकी कृपा से हमको सब सामग्री यहां प्राप्त हुई। और देख, यह सेतु हमने बांधकर लंका में आके उस रावण को मार तुझको ले आए।'

इसके सिवाय वहां वाल्मीकि ने अन्य कुछ भी नहीं लिखा।'

द्वारिका–धाम के सम्बन्ध में महर्षिजी ने इस प्रकार लिखा है। '**प्रश्न**–द्वारिकाजी के रणछोड़ जी, 'नर्सीमहता' के पास हुण्डी भेज दी, और उसका ऋण चुका दिया। इत्यादि बात भी क्या झूंठ है?

उत्तर–किसी साहुकार ने रुपए दे दिए होंगे। किसी ने झूंठा नाम उड़ा दिया होगा कि श्रीकृष्ण ने भेजे। जब संवत् 1914 के वर्ष में तोपों के मारे मन्दिर–मूर्त्तियां अंगरेजों ने उड़ा दी थीं, तब मूर्ति कहां गई थी? प्रत्युत बाघेर लोगों ने जितनी वीरता की और लड़े, शत्रुओं को मारा, परन्तु मूर्त्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी। जो श्रीकृष्ण के सदृश कोई होता, तो इनके धुर्रे उड़ा देता, और ये भागते फिरते। भला यह तो कहो कि जिसका रक्षक मार खाए, उसके शरणागत क्यों न पीटे जाएं? बद्रीनाथ–धाम के सम्बन्ध में महर्षि लिखते हैं– 'वैसे ही 'बद्रीनारायण' में ठगविद्यावाले बहुत से बैठे हैं।'

वास्तव में इन तथाकथित व्रतों, तीर्थों तथा धामों के प्रचलन तथा अनेक प्रकार के पाखण्डों और आडम्बरों का मुख्य कारण यही है कि व्यक्ति अपने किए हुए पापों से बिना भोगे ही मुक्ति चाहता है। जबकि यह मान्यता एकदम ही शास्त्र विरूद्ध तथा बुद्धिगम्य नहीं है। बहुत प्रसिद्ध उक्ति है– **'जैसी करनी वैसी भरनी।'** गीता में श्रीकृष्ण जी अर्जुन से साफ शब्दों में कहते हैं–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।
(गी०2–47)

अर्थात् तुझे केवल कर्म करने का अधिकार है उसके फल पर तेरा अधिकार नही है अर्थात् कर्मोका फल देना तो परमात्मा के अधिकार में है। इसलिए तू कर्म का हेतु तो बन सकता है मगर कर्म–फल का हेतु तू नहीं है... अर्थात् 'अमुक कर्म का मुझे अमुक फल ही मिले' ऐसी भावना व्यक्ति को नहीं करनी चाहिए क्योंकि व्यक्ति ने कोई एक ही कर्म तो किया नहीं है... जन्मजन्मान्तरों के कर्मों का एक सिलसिला है, अब यह तो परमात्मा ने ही देखना है कि उन कर्मों के संग्रह में फल किस प्रकार से फिट बैठता है... हम इच्छा करें न करें फल तो परमात्मा की न्याय–व्यवस्था के अन्तर्गत मिलना ही है मगर यह जरूरी नहीं कि जो फल मिलेगा वह हमारी अच्छा के अनुकूल ही हो। फल अनुकूल भी हो सकता है और प्रतिकूल भी हो सकता है... इसलिए कर्म करने की इच्छा तो करनी है, तभी कर्म होगा मगर फल परमात्मा के ही ऊपर छोड़ देना चाहिए... इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश (सप्तम समुल्लास) में **प्रश्न** उठाया– 'जीव स्वतन्त्र है वा परतन्त्र? **उत्तर**–अपने कर्त्तव्य कर्मों में स्वतन्त्र और ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र है। **'स्वतन्त्रः कर्त्ता'** यह पाणिनीय व्याकरण का सूत्र है। जो स्वतन्त्र अर्थात् स्वाधीन है, वही कर्त्ता है। **प्रश्न–स्वतन्त्र** किसको कहते हैं? **उत्तर**–जिसके आधीन शरीर प्राण इन्द्रिय और अन्तःकरणादि हों। जो स्वतन्त्र न हो, तो उसको पाप–पुण्य का फल प्राप्त कभी नही हो सकता। क्योंकि जैसे भृत्य स्वामी और सेना सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मारके (भी) अपराधी नहीं होते, वैसे परमेश्वर की प्रेरणा और आधीनता से काम सिद्ध हों तो जीव को पाप वा पुण्य न लगे। उस फल का (भागी) भी प्रेरक परमेश्वर होवे। नरक–स्वर्ग अर्थात् दुःख–सुख की प्राप्ति भी परमेश्वर को होवे।

जैसे किसी मनुष्य ने शस्त्र–विशेष से किसी को मार डाला, तो वही मारने वाला पकड़ा जाता है, और वही दण्ड पाता है शस्त्र नही, वैसे ही पराधीन जीव पाप–पुण्य का भागी नहीं हो सकता। इसलिए अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में जीव स्वतन्त्र, परन्तु जब वह पाप कर चुकता है, तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर पाप के फल भोगता है। इसलिए कर्म करने में जीव स्वतंत्र, परन्तु जब वह पाप कर चुकता है, तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर पाप के फल भोगता है। इसलिए कर्म करने में जीव स्वतन्त्र और पाप (के) दुःख–रूप फल भोगने में परतन्त्र होता है।'इसी क्रम में वे आगे और **प्रश्न** उठाते हैं– 'जो परमेश्वर जीव को न बनाता और सामर्थ्य न देता, तो जीव कुछ भी न कर सकता। इसलिए परमेश्वर की प्रेरणा ही से जीव कर्म करता है। **उत्तर**–जीव उत्पन्न कभी न हुआ, अनादि है। जैसा ईश्वर और जगत् का उपादान कारण नित्य है। और जीव का शरीर तथा इन्द्रियों के गोलक परमेश्वर के बनाए हुए हैं, परन्तु वे सब जीव के अधीन हैं। जो कोई मन–कर्म–वचन से पाप–पुण्य करता है, वही भोगता है ईश्वर नहीं। जैसे किसी ने पहाड़ से लोहा निकाला, उस लोहे को किसी व्यापारी ने लिया। उसकी दुकान से लोहार ने ले तलवार बनाई। उससे किसी सिपाही ने तलवार ले ली फिर उससे किसी को मार डाला। अब यहां जैसे वह लोहे को उत्पन्न करने, उससे लेके तलवार बनाने वाले और तलवार को पकड़कर राजा दण्ड नहीं देता, किन्तु जिसने तलवार से मारा वही दण्ड पाता है, इसी प्रकार शरीरादि की उत्पत्ति करने वाला परमेश्वर उसके कर्मों का भोक्ता नहीं होता, किन्तु जीव को भुगानेवाला होता है। जो परमेश्वर कर्म कराता तो कोई जीव पाप नहीं करता। क्योंकि परमेश्वर पवित्र और धार्मिक होने से किसी जीव को पाप करने में प्रेरणा नहीं करता। इसलिए जीव अपने काम करने में स्वतन्त्र है...'

उपरोक्त विवेचन से यह भली प्रकार से स्पष्ट हो गया कि बिना भोगे व्यक्ति के कर्म कभी भी क्षीण नहीं होते हैं। स्वयं परमपिता परमेश्वर भी व्यक्ति के किए हुए कर्मों को क्षमा नहीं कर सकता फिर किसी व्यक्ति विशेष के द्वारा या किसी स्थान विशेष में जाकर किए हुए पाप कैसे क्षमा हो सकते हैं? इसलिए भवसागर से पार उतरने के लिए जिन तथाकथित व्रतों, तीर्थों तथा धामों आदि की कल्पनाएं कर रखी हैं उनका इस रूप में कोई महत्व नहीं है। क्योंकि व्यक्ति के कर्म ही उसे अच्छी या बुरी गति देने का कारण हैं अतः व्यक्ति को अपने कर्मों को ही सुधारना चाहिए। यह एक ध्रुव सत्य है कि कोई भी कर्म करने के बाद उसके फल की व्यवस्था परमात्मा के हाथ में चली जाती है मगर परमात्मा की बड़ी कृपा यह है कि उन्होंने हमें कर्म करने में स्वतन्त्र रखा है। अतः हमें इस कर्म–स्वतन्त्रता का लाभ उठाकर अपने जीवन में पुण्य कर्मों का संचय करना है, इसी में जीवन की सार्थकता है।

महादेव, सुन्दरनगर–174401, हि.प्र.

☞ पृष्ठ 06 का शेष

विकासवाद बनाम ...

करके प्रस्तुत किये हैं उसके अनुसार वर्तमान सृष्टि अपने से पूर्वरूपों का स्वतः विकसित और उन्नत रूप है। पूर्व से निध ारित न इसकी कोई योजना है और न इसका कोई प्रयोजन है। तदनुसार समस्त प्राणियों के शरीर अमीबा नाम के अत्यन्त निकृष्ट प्राणी से प्रारम्भ होकर एक–दूसरे का विकृत रूप है। हम आशा करते हैं कि विज्ञान व अध्यात्म विज्ञान के सम्बद्ध लोग इस पर विचार करेंगे और वैदिक सिद्धान्तों को आगामी काल में विज्ञान द्वारा स्वीकार किया जायेगा इसकी आशा करते हैं।

आईये, महर्षि दयानन्द के अनुसार संसार में विद्यमान ईश्वर, जीव व प्रकृति के स्वरूप को भी जान लेते हैं। उनके अनुसार – **"ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनादि, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टिकर्ता है। (सभी मनुष्यों को) उसी की उपासना करनी योग्य है।"** स्वमन्तव्य प्रकाश में उन्होंने लिखा है कि – **"ईश्वर कि जिसको ब्रह्म, परमात्मादि नामों से कहते हैं, जो सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है जिसके गुण, कर्म, स्वभाव, पवित्र हैं जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलप्रदाता आदि लक्षणयुक्त परमेश्वर है, उसी को मानता हूं।"** महर्षि दयानन्द के लघु ग्रन्थ आर्योद्देश्यरत्नमाला में ईश्वर के सारगर्भित स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि – **"जिसके गुण–कर्म–स्वभाव और स्वरूप सत्य ही हैं, जो केवल चेतन मात्र वस्तु है तथा जो एक, अद्वितीय सर्वशक्तिमान, निराकार, सर्वत्र व्यापक, अनादि और अनन्त, सत्य गुणवाला है, और जिसका स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी, दयालु और अजन्मादि है, जिसका कर्म जगत् की उत्पत्ति, पालन और विनाश करना तथा सब जीवों को पाप–पुण्य के फल ठीक–ठाक पहुंचाना है, उसी को ईश्वर कहते हैं।"** आर्य समाज का पहला नियम जो महर्षि दयानन्द जी का बनाया हुआ है, उसके अनुसार **"सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।"** इसका सरल अर्थ है कि सब सत्य विद्याओं तथा सृष्टि के समस्त पदार्थों का आदि मूल Origin and root ईश्वर है।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

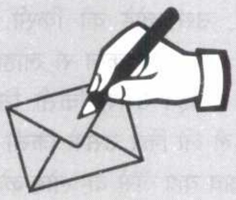

पत्र/कविता

श्रद्धापूर्वक पितरों की सेवा ही सच्चा श्राद्ध है।

जीवित माता पिता, दादा दादी इत्यादि ही पितर कहाते हैं इनकी श्रद्धापूर्वक सेवा करना ही श्राद्ध कहलाता है। इसे ही पितृ यज्ञ भी कहा है जो कि एक नित्य कर्म है संस्कृत भाषा में श्रत् नाम सत्य का है। श्रत् से ही श्रद्धा शब्द बना है। श्रद्धा से जो पितरों की सेवा की जाती है उसे ही श्राद्ध कहते हैं। सेवा जीवित व्यक्तियों को ही हो सकती है मृतकों की नहीं। मरने के बाद मनुष्य का पुनर्जन्म हो जाता है अथवा उसकी मुक्ति हो जाती है। इसलिये सब रिश्ते समाप्त हो जाते हैं और यह भी पता नहीं कि मर कर मनुष्य कहाँ जन्म लेता है।

कुछ समय से मृतक मनुष्यों के श्राद्ध की प्रथा चली हुई है और उनके नाम पर किसी ब्राह्मण को खीर का भोजन इन दिनों में खिलाने की प्रथा चल रही है जो युक्ति युक्त नहीं है क्योंकि उसको खाना नहीं पहुंचाया जा सकता। लालची ब्राह्मणों ने 15 दिन तक क्षीर युक्त भोजन अर्थात् खीर इत्यादि खाने के लालच में यह प्रथा चला रखी है और कहते हैं कि इससे वर्ष भर पितर तृप्त रहते हैं। और अगर ऐसे बकरे का मांस खिलाया जाये जिसके कान पानी पीते समय पानी को छूते हों तो पितर 12 वर्ष तक तृप्त रहते हैं। ऐसी अनर्गल बातें इन पाखंडी ब्राह्मणों ने कई शास्त्रों में लिख दी हैं जो मानने योग्य नहीं।

वास्तव में प्राचीन काल में वृद्ध व्यक्ति गृहस्थ आश्रम के पश्चात् जब वानप्रस्थी बन कर वनों में चले जाते थे तो वर्षा ऋतु में वनों में पानी भर जाता था तो वह लोग वर्षा काल में अपने पुत्रों पौत्रों के पास आकर ठहर जाते थे और वर्षा ऋतु की समाप्ति के बाद वापस बन जाने की तैयारी करते थे तब उनके पुत्र पौत्र इत्यादि 15 दिन तक खीर युक्त भोजन खिलाते थे और इसे पितृपक्ष कहा जाता था। जब वानप्रस्थी बनने की प्रथा बन्द हो गई तो लालची ब्राह्मणों ने इसे मृतकों पर लागू कर दिया। अब महर्षि दयानन्द ने वानप्रस्थी बनने की प्रथा फिर से आरम्भ कराई तो लोग रिटायर होने के पश्चात वानप्रस्थी बनने लगे हैं। आजकल वन तो समाप्त हो गये हैं इसलिए ऐसे लोगों के लिये वानप्रस्थ आश्रम बनाये गये हैं जहां रहकर यह लोग साधना करते हैं।

आर्य समाजों को चाहिये कि पितृपक्ष में जीवित पितरों का सम्मान करने का प्रचार किया करें और अपने अपने वृद्ध माता पिता तथा दादा इत्यादि की सेवा करने का सब लोगों को उपदेश दें तथा उनका किसी प्रकार निरादर न किया जाये। जो वृद्ध व्यक्ति वानप्रस्थ आश्रमों में न जा सकें उनकी सन्तान अपने घरों में ही उन की श्रद्धापूर्वक सेवा करें और उनका आशीर्वाद प्राप्त करें। इसके बिना माता पिता का ऋण चुकाया नहीं जा सकता। अगले जन्म में उनको अपने कर्मानुसार सब कुछ मिलेगा। स्वर्गवासी माता पिता की बरसी मनाई जा सकती है इससे उनके गुणों को याद कर अपने जीवन में ढाल सकते हैं। इसे स्मृति दिवस कहा जाता है उस दिन हवन करना चाहिये।

अश्विनी कुमार पाठक
सी 233 नानक पुरा, नई दिल्ली–21

****

'विष ही महर्षि की मृत्यु का कारण' के सन्दर्भ में

मेरा लेख 'जगन्नाथ ने महर्षि दयानन्द को दूध में विष दिया–एक झूठी कहानी' 'आर्य जगत' के 25 मई से 31 मई 2014 तक के अंक में छपा था। उसी लेख के कारण डॉ. अशोक आर्य ने अपने लेख में प्रतिक्रिया व्यक्त की है। इसी के उत्तर में ये पंक्तियां लिख रहा हूँ।

जानने की बात यह है कि 'स्वामी जी को विष दिया गया या नहीं' इस विषय को मैंने अपने लेख में उठाया ही नहीं। मैंने अपने लेख में काल्पनिक नाम जगन्नाथ और उसे स्वामी जी द्वारा चार–पाँच सौ रुपए देने की बात उठाई है। स्वामी जी को उस रात दूध धौड़ मिश्र नाम के रसोईए ने पिलाया था जो शाहपुर का रहने वाला था और बाद में भी स्वामी जी के साथ ही रहा था। बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पण्डित लेखराम तथा श्री गोपाल राव हरि द्वारा लिखित महर्षि दयानन्द की तीनों जीवनियों में ऐसा ही लिखा है। तो फिर नेपाल का रहने वाला जगन्नाथ कहां से आ गया और उसे स्वामी जी द्वारा चार–पाँच सौ रुपए देने की बात कहां से आई। मेरे लेख का यही विषय था।

लगता है कि विद्वान् मेरे लेख को समझने का प्रयास नहीं किया और अपने लेख में मेरे नाम से अपनी मन घडन्त अनर्गल बातें लिख डालीं। उन्होंने यह भी लिखा है कि महर्षि को दूध देने वाला जगन्नाथ था, धौड़मिश्र था या कोई और–इस विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। अरे? यही तो मेरे लेख का विषय है।

स्वामी जी द्वारा जगन्नाथ को चार–पाँच सौ रुपए देने की बात पर अशोक आर्य जी चुप रहे, भला क्यों। उस समय के चार–पाँच सौ रुपए अब के कम से कम एक लाख रुपए बनते हैं। क्या इतनी बड़ी धन राशि महर्षि अपने तथा कथित कातिल को दे सकते थे? कदापि नहीं। यदि कोई प्रमाण हो तो सामने आना चाहिए।

कृष्ण चन्द गर्ग
831/सैक्टर–10, पंचकूला (हरियाणा)
0172–4010679

****

सुनो स्वरुपानन्द जी आप लगाकर ध्यान

जगत गुरु दयानन्द थे, ईश्वर भक्त महान।
देशभक्त, धर्मात्मा, सत्वादी इंसान।।
सत्वादी इंसान, सदाचारी तपधारी।
वीर साहसी बली, महात्यागी उपकारी।।
चरित्रवान गुणवान, वेद प्रचारक नामी।
मानवता के पुंज, निराले थे वे स्वामी।।

भूल गया था वेद पथ, यह सारा संसार।
पौंगापंथी धर्म के, थे तब ठेकेदार।।
थे तब ठेकेदार, पाप का जोर यहाँ था।
पाखंडियों का आर्यवर्त्त में शोर यहाँ था।।
वेद विरोधी लोग, यहाँ आदर पाते थे।
ईश्वर भक्त महान, यहाँ धक्के खाते थे।।

देव दूत दयानन्द ने किया वेद प्रचार।
काँप उठे थे धूर्तजन, सुन ऋषि की हुंकार।।
सुन ऋषि की हुंकार, नास्तिक खल दहलाए।
वैदिक पथ पर चलो, सभी ऋषि ने समझाए।।
कुरान, पुराण, इंजील, झूँठ की हैं सब गठरी।
इन से कभी न स्वर्ग, बनेगी दुनियाँ सगरी।।

सुनो स्वरुपानन्द जी! आप लगा कर ध्यान।
वेदों के पथ पर चलो, यदि चाहो कल्याण।।
यदि चाहो कल्याण, पुराणों को तुम त्यागो।
निराकार जगदीश, मान लो, अब तो जागो।।
जग का स्वामी एक, न आप अनेक बनाओ।
सच्चाई उर धार, जगत में आदर पाओ।।

ईश्वर का सुमरन करो, आप सुधारो भूल।
साईं पूजा का सुनो, जड़ पूजा है मूल।।
जड़ पूजा है मूल, राष्ट्र के पतन का कारण।
करो आप अवतारवाद का शीघ्र निवारण।।
जड़ पूजा से हुई, लूट भारत की भारी।
घातक है अवतार वाद की, यह बीमारी।।

जगत गुरु दयानन्द के मानो तुम उपकार।
सुख पाओगे संत जी! तजदो बुरे विचार।।
तज दो बुरे विचार, महामानव बन जाओ।
आडम्बर दो त्याग, जगत में नाम कमाओ।।
याद रखो! संसार, आपका यश गाएगा।
नाम स्वरुपानन्द, सार्थक हो जाएगा।।

पं. नन्दलाल निर्भय
ग्राम – पत्रालय बहीन, जनपद–पलवल (हरि.)
चलभाष 9813845774

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 05 का शेष

उत्कृष्ट शङ्का ...

भी हैं, जिनमें निर्दोष व्यक्तियों को दुःख दिया जाता है। अगर आप यह मानते हैं कि अन्याय होता है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि, बिना दोष के भी दुःख मिलता है। वो ही अन्याय है।

चोरों ने सेठ के यहाँ जो दो लाख रुपये की चोरी की, यह था– अन्याय। सेठ निर्दोष था। उसका कोई दोष नहीं था। फिर भी चोरों ने सेठ के यहाँ चोरी करके सेठ को दुःख दिया। इसका नाम अन्याय है। यह पिछला कर्म–फल नहीं है।

अब इसका विश्लेषण करने के लिए किसी भी घटना को देखिए। उसका अच्छी तरह से परीक्षण कीजिए और यह विचार कीजिए कि, यह जो किसी व्यक्ति को दुःख मिला, वह न्याय से मिला, या अन्याय से मिला? अगर पता चले कि, न्याय से मिला, तब तो वह है कर्मफल। कारण कि, "जो न्याय से सुख–दुःख मिलता है, तो वो कर्म–फल होता है।" और जो अन्याय से मिलता है, वो कर्म–फल नहीं होता है। सेठ के यहाँ चोरी हुई, दो लाख का सामान चोर ले गए। क्या यह न्याय हुआ? नहीं हुआ न। तो समझ लेना, यह सेठ का कर्म–फल नहीं है।

न्याय के विरूद्ध अपील (केस) नहीं होती है। न्याय को तो स्वीकार करना पड़ता है। जब अन्याय होता है, तो उसके विरूद्ध अपील होती है, जैसे चोर के विरूद्ध कोर्ट में अपील होती है। सेठ जी पुलिस में शिकायत करते हैं, कोर्ट में केस करते हैं कि हमारे यहां चोरी हुई, हमारा माल वापस दिलाओ। तो जब अपील करते हैं, मतलब वो अन्याय हुआ।

कर्म–फल के कुछ नियम हैं। उन नियमों को समझ लेंगे, तो आप बहुत सी घटनाओं में इस बात का निर्णय कर लेंग कि यह कर्म–फल हुआ, या अन्याय हुआ।

इस एक उदाहरण से आप बीस बीतें समझ लीजिएगा। रेल में जा रहे हैं, दुर्घटना हो गई, पाँच लोग मर गए, बीस लोग घायल हो गए, शेष ठीक–ठाक बच गए। यहाँ लोग कहेंगे– "जो पाँच मर गए, इनकी मौत यहीं लिखी थी। यह इनका कर्म–फल था।" यह बिल्कुल झूठ बात है, बिल्कुल गलत बात है। इसका भी यही उत्तर है, जो सेठ की चोरी वाला है। अगर पाँच की मौत यहीं लिखी थी, तो किसने लिखी थी? ईश्वर ने। क्या ईश्वर जो लिखता है, वो सही लिखता है, या गलत लिखता है? सही लिखता है, और वो कर्म–फल के अनुसार लिखता है। यह तो उनका कर्म–फल था, यहीं उनको मरना था, अगर यही मानते हैं तो रेल इंजन के ड्राइवर को ईनाम दो। उसने भगवान के आदेश का पालन किया है। इनकी मौत आयी थी, इसलिए उसने इनको मार दिया। देंगे ईनाम? नहीं देंगे। जो चोर वाली घटना में उत्तर है, वही इस घटना का भी उत्तर है। चाहे वो ट्रक एक्सीडेंट हो, चाहे प्लेन एक्सीडेंट हो, कोई भी दुर्घटना हो।

किसी भी दुर्घटना में कोई भी व्यक्ति मर जाता है, घायल हो जाता है, वो पूर्व में किए गए कर्मों का फल नहीं है। ट्रक वाले ने शराब पीकर बेलगाम गाड़ी चलाई, ठोक दिया। तो हाथ–पाँव टूट गए, व्यक्ति की मृत्यु हो गई, यह कर्म–फल नहीं है। यह अन्याय है। ऐसे ही सभी समस्याओं को आप सुलझा लेंगे।

यहाँ पर एक श्रोता ने पूछा कि– "एक बच्चा पैदा होते ही चार घण्टे में मर गया तो क्या वह इतनी ही आयु लेकर आया था?" तब मैंने इसका उत्तर दिया कि, यह कठिन (उलझा हुआ) प्रश्न है। इसका तो बहुत विश्लेषण करना पड़ेगा। डॉक्टर की भूल थी कि नहीं थी, इसका निर्णय करना बहुत कठिन है। बच्चे माता–पिता की भूल से भी मरते हैं, गलत दवाई से भी मरते हैं।

हमारी भूल हमें पकड़ में नहीं आती है। कैसे होती है भूल? एक रोगी आई. सी.यू. में था। कभी होश में आता था, तो कभी बेहोश हो जाता था। ऐसे–ऐसे झोले खा रहा था जीवन–मृत्यु के बीच में। बीच में राउण्ड पर डॉक्टर साहब आए, उन्होंने चेक किया और डिक्लेयर (घोषित) कर दिया कि "सिस्टर ले जाओ, रोगी मर गया है।" इतने में वो रोगी होश में आ गया और उसने सुन भी लिया कि डॉक्टर साहब ने बोल दिया कि रोगी मर गया। इतने में रोगी मरी–मरी सी आवाज में बोला– "डॉक्टर साहब, मैं अभी मरा नहीं हूँ, जिन्दा हूँ।" तो नर्स ने डॉटकर कहा– "चुप रहो, डॉक्टर को तुमसे ज्यादा मालूम है।" अब बताइए, डॉक्टर को ज्यादा मालूम है या रोगी को?

तात्पर्य है कि, डॉक्टर भी मनुष्य है, परमात्मा नहीं है। उससे भी भूल हो सकती है, गलती हो जाती है। केमिस्ट की भूल हो सकती है। कभी एक्सपायरी डेट की दवा दे दी। और जो अनेक नियम पालन करने पड़ते हैं, उनमें भूल हो जाती है। गर्भावस्था में माता ने खाने–पीने में भूल कर दी, उठने–बैठने में भूल कर दी, झटका लग गया। छोटे बालक की मृत्यु के पता नहीं कितने कारण हो सकते हैं। वो व्यक्ति भूल जाता है कि हमने कहाँ गड़बड़ की। और कहता है कि– "साहब मैंने भूल कहाँ की।" जबकि वह की होती है उसने। कभी वह भूल छुपाने की कोशिश करता है। ऐसे बहुत सारे कारण होते हैं।

किसी भी घटना का विश्लेषण करते समय यह ध्यान देना है कि जो दुःख मिल रहा है, वो न्याय से मिल रहा है, या अन्याय से। कसौटी याद रखिए:–

यदि न्याय से दुःख मिल रहा है, तो कर्म–फल, और अन्याय से मिल रहा है तो कर्म–फल नहीं।

सेठ के यहाँ चोरी हुई, यह अन्याय से उसको दुःख दिया गया। यह कर्म–फल नहीं है।

चोर पकड़ा गया, चोरी करने के बाद, उसको छह माह की जेल हुई या एक वर्ष की जेल हुई। यह क्या हुआ? यह न्याय हुआ। जो न्याय है, वो कर्म–फल है। जिसने चोरी की, उसको जेल हुई। दूसरे ने चोरी नहीं की, उसको जेल नहीं हुई।

चोरी की किसी और ने, लेकिन जेल में गया कोई दूसरा, तो इसे अन्याय कहेंगे।

ऐसे भी किस्से बहुत आते हैं। एक व्यक्ति ने किसी का खून कर दिया और वह बीस साल तक नहीं पकड़ा गया, खुला घूमता रहा। बीस साल बाद हत्या की एक और घटना हुई, और इस बार हत्या किसी दूसरे ने की, तथा यह निर्दोष होते हुए पकड़ा गया। न्यायाधीश ने उसको जेल कर दी कि यह हत्यारा है। इस पर लोगों ने कहा– "इसको बीस साल पहले वाली घटना का दंड अब मिला है।" यह बिल्कुल झूठ बात है।

पहले बीस साल वाली घटना में वो दोषी था, तब उसको कर्म का दंड नहीं मिला। जबकि दूसरी घटना में वह दोषी नहीं था। निर्दोष होने पर भी उसको दंड मिला, जबरदस्ती उसको जेल हो गई। दानों जगह गलत हुआ। यह पिछली हत्या का दंड (कर्मफल) नहीं है। वो मामला अलग था, यह मामला अलग है। वहाँ मरने वाला कोई और था, यहाँ मरने वाला कोई और है। दो अलग–अलग केसेस हैं।

(6)छठा नियम– यदि कर्म करें, तो फल अवश्य मिलेगा। उसमें छूट–छाट कुछ नहीं। जो कर्म है, उस कर्म को देखिए। उस कर्म का फल देखिए। उस कर्म का फल से संबंध जोड़कर देखिए कि उस व्यक्ति को जो दंड मिल रहा है, वो उस कर्म से संबंधित है, या नहीं। यदि कर्म से संबंधित है, और ठीक न्याय से फल मिल रहा है, तब तो है वह कर्म–फल।

जो कर्मफल के नियम हैं, वो लागू कीजिएगा। अच्छे कर्म का कैसा फल– 'अच्छा फल'। और बुरे कर्म का कैसा फल–'बुरा फल'। और कर्म ही नहीं करे तो ? 'कोई फल नहीं। अब इसने यहाँ दूसरी घटना में कर्म तो किया ही नहीं, तो फल किस बात का?

(7)सातवाँ नियम – पहले कर्म, बाद में फल। उस खूनी व्यक्ति का कर्मफल, प्रकरण अदालत नहीं पहुँचा, इसलिए उसको दंड नहीं मिला। अब या तो न्यायाधीश बीस साल पहले वाली फाइल खोले। उसकी फिर से रिसर्च हो कि बीस साल पहले जो हत्या हुई थी, उसका हत्यारा कौन है? और ढूँढ–ढाँढ के उसी केस का दंड उसको दे, तब तो ठीक है। पर यहाँ तो, केस किसी और का चल रहा है।, और दण्ड उसे मिल रहा है। उसका तो केस चल ही नहीं रहा है।

जिन घटनाओं का दंड यहाँ न्यायाधीश और सरकार ने नहीं दिया, नहीं दे पाए, पकड़ में नहीं आए, वो व्यक्ति के खाते में जमा रहेंगे। उनका फल ईश्वर अंत में देगा। इस प्राकर से न्याय–अन्याय को समझना चाहिए।

– दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़वन (गुजरात)

☞ पृष्ठ 09 का शेष

विकासवाद बनाम ...

अब दूसरे चेतन तत्व "जीवात्मा" के स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं। उनके सिद्धान्तों के अनुसार जीवात्मा चेतन, अल्पज्ञ, एकदेशी, सूक्ष्म, आकाररहित, जन्म–मरण धर्मा, दुःखों से निवृत्ति की इच्छा रखने वाला, अजन्मा, नित्य, अनादि, सत्कर्मों से दुःखों से निवृत्त होकर वेदाध्ययन कर श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव को धारण कर जन्म मरण से छूट कर मुक्ति को प्राप्त करने में समर्थ तत्व व एक पदार्थ है जिसको अग्नि जला नहीं सकती, मृत्यु के बाद भी जिसका अस्तित्व समाप्त नहीं होता, जल इसे गला नहीं सकता, शस्त्र इसे काट नहीं सकते और यह ऐसा पदार्थ है कि वायु इसे सुखा नहीं सकती। इसी प्रकार से प्रकृति को भी जान लेते हैं। प्रकृति की दो अवस्थायें हैं एक कारण व दूसरी कार्य। कारण अवस्था में यह अति सूक्ष्म, सत्व, रज व तम गुणों की साम्यावस्था, ईश्वर के अधीन रहती है। सारा आकाश इससे भरा हुआ होता है। इसी कारण प्रकृति से ईश्वर रचना कर परमाणु आदि अथवा महतत्व, अहंकार, पांच तन्मात्रायें आदि बनाकर सृष्टि जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, नक्षत्र आदि हैं, निर्माण करता है। महर्षि दयानन्द व उनसे पूर्व अनेकानेक पूज्य ऋषियों द्वारा प्रस्तुत ज्ञान की सत्य, यथार्थ व वास्तविक है।

हम यह अनुमान करते हैं कि भावी समय में कभी न कभी विज्ञान को महर्षि दयानन्द के इन वेदों व वैदिक साहित्य पर आधारित विचारों को स्वीकार करना ही होगा और तब विकासवाद का स्थान वैदिक त्रैतवाद को मिलेगा जिसमें वैज्ञानिकों व धार्मिक लोगों सहित सारी मानवजाति सम्मिलित होगी।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985123

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 08-09/10/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी.राजगढ़ में समाज सुधार हेतु हुई मैराथन दौड़

डी.ए.वी. राजगढ़ में आर्य युवा समाज के सदस्यों ने पूरा एक मास समाज सुधार के रूप से मनाया। आर्य युवा संगठन प्रति मास एक संकल्प को लेकर चलता है और उस पर कार्य करता है। डी.ए.वी. स्कूल राजगढ़ की प्रातः कालीन प्रार्थना सभा में आर्य युवा समाज, हिमाचल प्रदेश, की प्रधाना श्रीमती रीना मल्हौत्रा जी ने विद्यालय के सभी कर्मचारियों व विद्यार्थियों को "मेरा क्या? मुझे क्या?" से ऊपर उठकर कार्य करने के लिए प्रेरित किया तथा सभी को इस संकल्प को पूर्ण करने के लिए शपथ भी दिलवाई। आर्या युवा संगठन के सदस्यों ने मैराथन दौड़ का भी आयोजन किया। इस दौड़ का उद्देश्य समाज सुधार था। विद्यार्थियों ने समाज सुधार हेतु स्लोगन लिखे और अपनी टी-शर्टस पर लगाकर मैराथन दौड़ में भाग लिया। इस अवसर पर समाज सुधार हेतु पैंम्पलेट्स भी तैयार किए गए और जनसाधारण में बॉटे गए।

आर्य युवा समाज द्वारा कम्बल वितरण

आर्य युवा समाज' जम्मू व कश्मीर द्वारा कश्मीर घाटी एवं जम्मू के बाढ़ पीढ़ित लोगों के लिए राहत सामग्री वितरण की चौथी खेप के रूप में जम्मू क्षेत्र के प्रभावित इलाकों में दिनांक 26.9.2014 को कम्बल वितरित किए गए। अपना घर-बार एवं सब कुछ गंवा चुके ये लोग खुले में जीवन यापन करने को विवश हैं। ऐसे में राहत सामग्री के रूप में घर-गृहस्थी की वस्तुओं की अंत्यत आवश्यकता है। 'आर्य युवा समाज' (जम्मू व कश्मीर) ने गुढ़ा मनलासां, कोठे चिबां कोठे ब्राह्मणा, गुढ़ा मैरा, धम पुर, दीरा, कृष्णपुरा एवं ठकवाल वासियों को कम्बल वितरित किए।

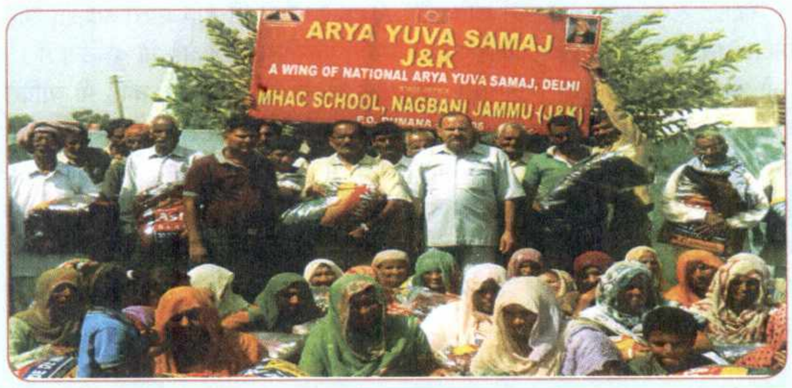

डी.ए.वी. करनाल में वनमहोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सै.-9 करनाल में वनमहरोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया इस अवसर पर स्टेट [illegible] ऑफ पटियाला के मैनेजर श्री [illegible] रंग ने अपने कर-[illegible]मलों द्वार[illegible]धारोपण किया। इसके बाद उन्होंने [illegible]च्चों को सम्बोधित करते हुए क[illegible] कि पर्यावरण को संतुलित रखने के लिए पेड़ लगाना बहुत जरूरी है क्योंकि प्रदूषण बढ़ने का एक मुख्य कारण पेड़ों का कम होना भी है। इस अवसर पर स्कूल की मुख्याध्यापिका श्रीमती अंजना पांडे, अध्यापकगण व बच्चे उपस्थित रहे। स्कूल के अध्यापक/अध्यापिकाओं व बच्चों द्वारा एक रैली भी निकाली गई। "पेड़ लगाओं, पर्यावरण बचाओ", "Live Free, Grow More Trees" आदि नारे लगाकर लोगों को पेड़ लगाने के लिए जागरूक किया गया।

आर्य युवा समाज पंजाब ने पाँच लाख की मैडिकल सहायता से बचाया जीवन

आर्य युवा समाज पंजाब व डी.ए.वी. स्कूल सराभा नगर एक्टेंशन लुधियाना सदैव ही स्वामी दयानंद सरस्वती व आर्य समाज के सिद्धांतों का पालन करते हुए असहाय व मजबूत लोगों की सहायता करने में अग्रणी रहा है। इस बार भी आर्य युवा समाज पंजाब एवं विद्यालय के स्टाफ, छात्रों व अभिभावकगण तथा अनेक शुभचिंतकों ने मिलकर कुल पाँच लाख रुपये की धन राशि जमा की ताकि विद्यालय के अकाऊँटेंट के पद पर कार्य कर रहे श्री उमेश कुमार शर्मा जी का उचित रूप से इलाज करवाया जा सके। श्री उमेश कुमार शर्मा जी को अचानक हृदय गति में अवरोध महसूस हुआ, जिसके चलते उन्हें डी.एम. सी अस्पताल लुधियाना में दाखिल करवाना पड़ा था। जहाँ हालत ज्यादा गंभीर होने के कारण वे कौमा में चले गए और महीने तक कौमा में रहे।

परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण वे इलाज करवा पाने में अक्षम थे। इन परिस्थितियों में आर्य युवा समाज पंजाब के प्रदेशाध्यक्ष एवं प्रधानाचार्य डॉ.मोहन लाल शर्मा के आह्वान पर विद्यालय के स्टाफ, छात्रों व अभिभावकगण तथा अनेक शुभचिंतकों ने उनके इलाज के लिए दिल खोलकर दान दिया और अपने परिवार के इस सदस्य का अस्पताल का सारा खर्च वहन किया। डॉ. मोहन लाल शर्मा ने कहा कि आगे में भी आर्य युवा समाज पंजाब व डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सराभा नगर एक्स्टेंशन लुधियाना इस तरह के परोपकारी कार्य करता रहेगा।

मुद्रक व प्रकाशक – एस.के.शर्मा, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – श्री पूनम सूरी